ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 03 सितम्बर 2017 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 03 सितम्बर 2017 से 09 सितम्बर 2017

भाद्र शु.– 12 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 58, अंक 87, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

दुर्गापुर में ऋग्वेद शतक महायज्ञ से मनाया वेद प्रचार सप्ताह

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पश्चिम बंगाल के सभी विद्यालयों के आर्य युवा समाजों द्वारा श्रावणी पर्व से श्री कृष्ण जन्माष्टमी तक वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया। इसके अंतर्गत प्रत्येक दिन हवन, भजन, प्रवचन का आयोजन किया गया। इस शुभ कार्य में बड़ी संख्या में अभिभावकों ने भाग लिया। इस बार आर्य युवा समाज डी. ए.वी. मॉडल स्कूल, दुर्गापुर में ऋग्वेद शतकम् महायज्ञ का आयोजन किया गया। यजमान के पद पर विराजमान श्रीमती पापिया मुखर्जी (प्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पश्चिम बंगाल) ने वेद प्रचार सप्ताह के विषय में जानकारी देते हुए कहा कि वेद प्रचार सप्ताह का उद्देश्य जन–जन तक वेदों के ज्ञान को पहुँचाना है। अनुमंडल वन अधिकारी दुर्गापुर श्री मृणाल कांति मंडल भी इस महायज्ञ के मुख्य यजमान बने। इस दिन पर्यावरण शुद्धि का अनोखा दृश्य उपस्थित हो गया जब यज्ञ और वृक्षारोपण का कार्यक्रम एक साथ आयोजित किया गया।

वेद प्रचार सप्ताह के अंतर्गत चित्रांकन प्रतियोगिता और आशुभाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। चित्रांकन प्रतियोगिता में प्रथम स्थान एम.डी. उजैर, द्वितीय स्थान सायन शेखर घोष, तृतीय स्थान कुमार रिषांक ने प्राप्त किया। अन्य सभी प्रतिभागियों ने भी अच्छा प्रदर्शन किया। आशुभाषण प्रतियोगिता में भी प्रतिभागियों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। जिसमें प्रथम स्थान उत्सव झा ने प्राप्त किया। द्वितीय स्थान अंगना मजूमदार ने प्राप्त किया और तृतीय स्थान दिव्यांशु माहातो ने प्राप्त किया।

वेद प्रचार सप्ताह के समापन समारोह में विशेष यज्ञ के पश्चात् सभी प्रथम, द्वितीय, तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले प्रतिभागियों को प्रधान महोदया ने पुरस्कृत करके उनका उत्साहवर्धन किया और छात्रों को इस प्रकार के आयोजनों में भाग लेने के लिए प्रेरित भी किया। अंत में शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

गया (बिहार) में आर्य प्रशिक्षण शिविर में कराया गया आर्य बनने का संकल्प

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, बिहार के तत्वावधान में डी. ए.वी. पब्लिक स्कूल, कैन्ट एरिया, गया में दो दिवसीय आर्य प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया।

इसमें गया जिले के विभिन्न गाँवों से लगभग 200 आर्य जन सम्मिलित हुए। इन आर्यजनों के आवास तथा भोजनादि का प्रबंध विद्यालय के प्रांगण में ही किया गया था। इस प्रशिक्षण शिविर में वक्ता के रूप में आचार्य हनुमत प्रसाद उपाध्याय तथा श्रीमती इन्द्रा देवी, नई दिल्ली से पधारे थे।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, बिहार के प्रधान डॉ. यू.एस. प्रसाद की देख–रेख में यज्ञ के कार्यक्रम के साथ आर्य प्रशिक्षण शिविर का शुभारम्भ हुआ। प्रमुख वक्ता के रूप में आचार्य हनुमत प्रसाद उपाध्याय जी ने सभी आर्य बन्धुओं को सम्बोधित करते हुए कहा– आज हमारा देश फिर से पाखण्ड, वाह्याचार, आडम्बर, अन्धविश्वास, जाति–पाति, छूआछूत और दहेज–प्रथा जैसी कुरीतियों से जकड़ा हुआ है। ऐसे में हम आर्यजनों का कर्तव्य है कि बड़ी मुस्तैदी से इन आडम्बरों को समाज से दूर करने का कार्य किया जाए जिससे एक स्वस्थ और आडम्बर मुक्त समाज का निर्माण किया जा सके। उन्होंने सभी आर्यजनों को बढ़चढ़कर इस कार्य में भाग लेने का आह्वान किया। उपाध्याय ने विभिन्न जगहों से पधारे लोगों में से जो आर्य नहीं थे उनको महर्षि दयानन्द सरस्वती के विचारों से अवगत कराया और यज्ञोपवीत धारण कराकर उन्हें आर्य बनाने का कार्य भी सम्पन्न किया।

दूसरे दिन प्रातःकाल यज्ञ के उपरान्त आचार्य हनुमत प्रसाद उपाध्याय ने विद्यालय के सभा कक्ष में अपने प्रवचन से उपस्थित आर्यजनों को वेदों के सारों का श्रवण कराया तथा उन्हें महर्षि दयानन्द के बताये मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी।

सायंकालीन सभा में 20 कुण्डीय यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें सभी आगत व्यक्तियों को यज्ञोपवीत धारण कराकर आर्य बनाने का संकल्प कराया गया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, बिहार के प्रधान एवं डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल गया प्रक्षेत्र के क्षेत्रीय निदेशक डॉ. यू.एस. प्रसाद के सक्रिय सहयोग से यह सम्पूर्ण कार्यक्रम संचालित हुआ। इस आर्य प्रशिक्षण शिविर का समापन शान्ति पाठ के साथ सम्पन्न हुआ।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ७

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 03 सितम्बर 2017 से 09 सितम्बर 2017

यज्ञ रचा, दान कर

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

न त्वां शतं चन ह्रुतो, राधो दित्सन्तमामिनन्।
यत् पुनानो मखस्यसे।।

ऋग् ६.६१.२७

ऋषिः **अमहीयुः आङ्गिरसः।** देवता **पवमानः सोमः।** छन्दः **गायत्री।**

● (हे आत्मन्!), **(राधः)** धन को, **(दित्सन्तं)** दान करना चाहते हुए, **(त्वा)** तुझे, **(शतं चन)** सौ भी, **(ह्रुतः)** कुटिल वृत्तियाँ व कुटिल जन, **(अ आमिनन्)** हिंसित अर्थात् मार्ग–च्युत न कर पायें, **(यत्)** जब, **(पुनानः)** (स्वयं को) पवित्र करता हुआ। (तू), **(मखस्यसे)** यज्ञ रचाता है।

● हे पवमान सोम! हे स्वयं को तथा मन, बुद्धि आदि को पवित्र करने वाले सात्विक–वृत्ति जीवात्मन्! जब तू परोपकार का यज्ञ रचाता है और अपना धन किन्हीं सत्पात्र व्यक्तियों को या संस्थाओं को दान देने का संकल्प करता है, तब बहुत–सी कुटिल स्वार्थ–वृत्तियाँ और बहुत–से कुटिल मनुष्य तेरे उस दान–व्रत की हिंसा करना चाहते हैं और तुझे दान के मार्ग से विचलित करने का प्रयत्न करते हैं। स्वार्थ–वृत्ति कहती है कि सहस्त्र, दश सहस्त्र, पचास सहस्त्र, लाख, दो लाख रूपया तुम अन्यों को दान कर कर रहें हो, तो क्या स्वयं भूखे मरना चाहते हो? देखो, सब अपनी सम्पति बढ़ा रहे हैं; जो सहस्त्रपति है वह लक्षपति बन रहा है, जो लक्षपति है वह करोड़पति बन रहा है। उनके पास कई–कई कोठियाँ हैं, मोटरकारें हैं, सेवक हैं। क्या दान का ठेका तुमने ही लिया है? क्या तुम्हारे ही भाग्य में यह लिखा है कि स्वयं तो मोटा–झोटा पहनो, रूखा–सूखा खाओ, झोपड़ी जैसे मकानों में रहो और दूसरों पर धन लुटाओ। पहले अपनी और अपने कुटुम्ब की स्थिति सुधारो, फिर अन्यों की सुध लेना। हे आत्मन्! तू उस स्वार्थ–वाणी को मत सुन। तुझे दान करने के लिए उद्यत देख कई स्वार्थी परिचित मनुष्य भी आकर मिथ्या ही आलोचना करते हैं कि तुम जिस संस्था को दान करने जा रहे हो, उसकी आन्तरिक अवस्था को भी जानते हो? उनमें सब खाऊ–पिऊ बैठे हैं, तुम्हारा दिया हुआ दान उन्हीं के पेट में जाएगा। हे आत्मन्! तू उन उन स्वार्थी जनों के भी कुटिल परामर्श पर ध्यान मत दे। सौ प्रकार की स्वार्थ–भावनाएँ और सौ स्वार्थी–जन भी तुझे तेरे दान के संकल्प से विचलित न कर सकें।

हे मेरे आत्मन्! वेद–शास्त्रों की वाणी सुन, जो तुझे दान के लिए प्रेरित कर रही है। तू अपनी कमाई में से प्रतिदिन या प्रतिमास कुछ निश्चित प्रतिशत दान–खाते में डाल और उसे लोक–कल्याण में व्यय कर। दान से दक्षिणा पानेवाले का तो हित होता ही है, उससे भी अधिक हित और मंगल दाता का होता है, यह वैदिक संस्कृति की भावना है। इसके विपरीत, "अकेला भोग करनेवाला मनुष्य पाप का ही भोग करता है"।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

अमृत-पान

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

गुरु नानकदेव जी के प्रचारकाल में हुई एक घटना का हवाला देते हुए स्वामी जी ने कहा जब तुम खाओ तो सोचो तुम क्या खा रहे हो? क्या यह गरीबों और अनाथों का खून तो नहीं। क्या यह सताए हुओं की आह से विष बना हुआ अन्न तो नहीं। जो इस प्रकार सोचकर खाते हैं, वे सुखी होते हैं।

दूसरी कथा में स्वामी जी ने कहा जो आलसी, कंजूस और पापी हैं, वे लंगड़े और लूले हैं। जो विषय–लम्पट हैं, विषयों में फँसे हुए हैं, वे अन्धे हैं। शेष रहे–उदार, बुद्धिमान और दानी। केवल वे ही स्वस्थ, सुन्दर और बलवान् हैं। वे हाथों से दान देते है। पाँवों से चलकर धार्मिक मेलों में जाते हैं, दुखियों की सहायता करते हैं। ईश्वर उनसे प्यार करता है और इन्हें ज्ञान देकर वह पद प्रदान करता है, जिसे मोक्ष कहते हैं। तुम अपने आपको देखो कि तुम क्या हो?

आगे पढ़ेंगे दो लघु कथायें

एक रहस्य

"नदी विशाल थी। लहरें जोरों पर थीं। पानियों का शोर और लहरों के थपेड़ों का ज़ोर एक विचित्र दृश्य प्रस्तुत कर रहा था। इस नदी के अथाह पानी में नौकाएँ थीं, जो इधर–उधर तैरती फिरती थीं। उन्हें न लहरों का भय था, न थपेड़ों का डर, न पानी की चिन्ता। नौका पर सवार लोग इधर से उधर और उधर से इधर आ रहे थे।"

इधर यह दृश्य था, दूसरी ओर एक और घटना घटित हो रही थी। कुछ नावों में पानी भर गया था। शनैः–शनैः इनमें पानी अधिक होता गया। होते–होते वे पूर्णरूप से भर गईं और यह लो! देखते–ही–देखते डूब गईं।

समझते हो यह क्या हुआ? जानते हो नदी का अथाह जल पहली नौकाओं को क्यों न डुबो सका और नौका के थोड़े से पानी से दूसरी नौकाएँ क्यों डूब गईं?

पहली नौकाओं ने पानी को अपने अन्दर स्थान नहीं दिया और दूसरी नौकाओं ने पानी को अपने अन्दर आने दिया, इसीलिए पहली नौकाएँ बची रहीं और दूसरी डूब गईं।

परन्तु यह दृश्य केवल इतनी ही बात को प्रकट नहीं करता। यह कुछ और भी कहना चाहता है। यह एक रहस्य को प्रकट करता है। यह घटना– यह दृश्य मनुष्य को हृदय के अन्दर विद्यमान अथाह समुद्र में रहने का ढंग सिखलाता है। यह बिना कहे शिक्षा देता है कि संसार के अन्दर रहो, निःसन्देह रहो। संसार को देखो और उससे लाभ उठाओ। इस पर तैरो और लोगों को इसके आर–पार पहुँचाओ, परन्तु सावधान। संसार को अपने हृदय के अन्दर मत आने देना। संसार को कभी अवसर न दो कि वह आपके हृदय में–दिल में छेद करे और उसके मार्ग से अन्दर प्रविष्ट हो। यदि यह एक बार प्रविष्ट हो गया और फिर उसे निकाला न गया तो यह संसार संसार के समुद्र में तुम्हें उसी प्रकार डुबा देगा, जिस प्रकार नौका नदी में डूब गई।

अपने हृदय में ईश्वरभक्ति का रोगन ऐसी सुदृढ़ता से करो कि सांसारिक पानी उस पर कुछ प्रभाव न कर सके। यह है ढंग दुनियाँ के अन्दर रहने का। जो लोग दुनियाँ में इस प्रकार रहते हैं, वे दूसरों के लिए भी पथ–प्रदर्शक का काम करते हैं और स्वयं भी तर जाते हैं। इस प्रकार ईश्वर के भक्त बनकर आओ, प्रतिदिन प्रार्थना किया करें कि हे ईश्वर–

मैं मुब्बरा[1](पवित्र) रहूँ हर पाप से यूँ तेरी तरह

रहूँ दुनिया में भी दुनिया से न्यारा होकर

नग़में[2](गीत) तेरी ही मुहब्बत के बहर शाख–शजर[3](प्रत्येक टहनी और वृक्ष पर)

गुलशर[4](उद्यान) दहर[5](संसार) में गाँव में हजारा[6](गेंदे के पुष्प के समान) होकर

विरद[7](नियमित रूप से) हो तेरा ही इक नाम जुबाँ पर हर दम

तेरी सूरत रहे आँखों का नज़ारा होकर

तेरी उलफ़त[1](प्रेम) में रहे खुर्शन्द हमेशा सरशार[2](नशे में चूर)

दिल में बस मेरे दिल वो जाँ से प्यारा होकर।।

शेष पृष्ठ 03 पर ☞

वेद के प्रादुर्भाव की कहानी–4

● भद्रसेन

संदर्भ– सारा भारतीय साहित्य वेदों को अपना मूलस्रोत मानता है। इसीलिए भारतीयता में वेदों को धर्मग्रन्थ का स्थान प्राप्त है। धर्म=जीवनलक्ष्य, सच्चाई, कर्त्तव्य आदि का नाम है। धर्मबोध के लिए हमारी परम्परा में समय–समय पर अनेक प्रयास किए जाते हैं। इसीलिए हमारे यहाँ स्वाध्याय का विशेष महत्त्व, स्वारस्य है। स्वाध्याय का एक अर्थ जहाँ अपने वेद का अध्ययन है, वहाँ अच्छी प्रकार से धर्मग्रन्थों को पढ़ना और आत्मनिरीक्षण भी है। इसी स्वाध्याय की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए ही वर्षाकाल में वेदों में वेदों का विशेष पारायण, प्रवचन, पठन होता है। यतो हि वर्षा से अन्य कार्यों में व्यवधान आने से वेद के स्वाध्याय का विशेष अवसर उपलब्ध हो जाता है।

वेदों में जहाँ से जुड़े विविध विषयों का विवेचन है, वहाँ वेद ने अपने सम्बन्ध के भी अनेक पहलुओं पर प्रकाश डाला है। हाँ, इस दृष्टि से प्रस्तुत वेदमन्त्र पर विचार कीजिए–

ओम् अपक्रामन् पौरुषेयाद् वृणानो दैव्यं वचः।

प्रणीतीरभ्यावर्तस्व विश्वेभिः सखिभिः सह।। अ. 7,105,1

शब्दार्थ–

पौरुषेयात् = पुरुषजन्य से अपक्रामन् = परे रहते हुए दैव्यम् = दिव्य, प्रकाशमय वचः = वचन, बात को वृणानः = स्वीकार करते हुए विश्वेभिः = सभी सखिभिः = समान स्थिति, परिचय वालों के सह = साथ प्रणीतीः = प्रकृष्ट नीतियों को अभ्यावर्तस्व = अच्छी प्रकार से वर्ताव में ला, इनका पालन कर।

भावार्थ–

पुरुष, मनुष्य अल्पज्ञ, स्वार्थी होते हैं। इसीलिए उनकी बातें दोषयुक्त हो सकती हैं। अतः उससे ऐसी स्थिति में दूर रह। इसकी अपेक्षा दिव्य सुविचारित बात, प्रभु प्रदत्त वेदवाणी को स्वीकार कर। ऐसी जो प्रगति पर ले जाने वाली बातें हैं। उनको अपने सभी परिचितों, पारिवारिकों, मित्रों के साथ मिलकर बार–बार वर्ताव में ला। हाँ, सामाजिकता के अभाव में कई बार व्यक्ति अकेला पड़ जाने पर अच्छाई को छोड़ बैठता है।

व्याख्या–

अपक्रामन् पौरुषेयात् – पुरुष शब्द पुरुष सूक्त। अध्याय के प्रथम चार मन्त्रों आदि में जहाँ स्पष्ट रूप से परमात्मा के लिए आया है, वहाँ अनेक मन्त्रों (यजु. 2,33, 12, 79) में मनुष्यों के लिए भी आया है। यहाँ पौरुषेय पुरुष का तद्धित रूप है, पुरुष (मनुष्य) जन्य के अर्थ में है, तभी तो उससे अलग रहने की बात की गई है। हम अपने चारों ओर प्रायः देखते हैं, कि मनुष्य स्वार्थ, लोभ और अल्पज्ञता आदि के कारण भ्रम, संशय, अस्पष्ट, अनिश्चित अर्थात् दोषयुक्त भी बात करते हैं। अतः उसकी उपेक्षा करने की बात मन्त्र कह रहा है।

वृणानो दैव्यं वचः – पूर्व की अपेक्षा जो बात, वचन दिव्य = प्रकाशमय, सुविचारित, सुपरीक्षित, स्पष्ट है। उस को ही स्वीकार करना चाहिए। मन्त्र यहाँ ज्ञान, विद्या को दो रूपों में बाँट रहा है। मनुष्यों का ज्ञान अधिकतम नैमित्तिक है अर्थात् निमित्त = सहायक रूप गुरु की सहायता से प्राप्त होता है। शिक्षक से शिक्षा प्राप्त करने की बात सर्वथा प्रत्यक्ष है, सर्वत्र प्रचलित है। अतः हम देखते हैं, कि हमारे पढ़ाने वाले हमारे साथ उपस्थित होने के कारण हमें पढ़ाते–लिखाते हैं। पर संसार के शुरुआत में यह परम्परा नहीं थी। अतः तब ज्ञान–परम्परा कैसे प्रारम्भ हुई? यह प्रश्न उभरता है। ऐसी स्थिति को सामने रखकर ही योगदर्शनकार पतञ्जलि मुनि ने कहा है– स एषः पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् 1,26 हमारे जो पूर्वज सबसे पहले हुए यह ईश्वर ही उनका भी गुरु है, क्योंकि वह काल = मौत के चक्र में नहीं आता, सदा रहता है। अतः संसार के प्रादुर्भाव के समय भी वह नित्य प्रभु ही उस समय सर्वज्ञ गुणयुक्त था। उसी सर्वज्ञ ने ही प्रारम्भ के व्यक्तियों को ज्ञान दिया। उसके पश्चात् तब आगे से आगे गुरु परम्परा चल सकी। अतः सर्वज्ञ ईश्वर ही संसार में पहला गुरु है। उसका दिया वेदज्ञान उस के समान ही दिव्य, सुविचारित है। अतः हम अल्पज्ञों को सर्वज्ञ के ज्ञान का सर्वदा– सर्वथा महत्त्व देना चाहिए।

प्रणीतीरभ्यावर्तस्व – दूसरी पंक्ति में मन्त्र सन्देश दे रहा है, कि अपने सभी सहयोगियों के साथ मिलकर वेद प्रतिपादित प्रकृष्ट नीतियों का जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अनुसरण कर। वारम्वार उनका पालन कर। वेद ने अपनी बताई हुई बातों को प्रणीति नाम दिया है। क्योंकि यह प्रणीति – प्र + नीति है, प्र = प्रकृष्ट, नीति = ढंग, तरीका, कार्य सिद्ध करने का उपाय है। यह सूर्य, वायु, जल आदि की तरह परखा हुआ, सुविचारित, स्पष्ट रूप में कार्य साधक ढंग है।

अन्य मन्त्रों में भी वेद ने अपने लिए सुनीति, संस्कृति, उक्थ्य जैसे संकेत दिए हैं। इसके साथ (**यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः** यह वेदवाणी कल्याणकारिणी वाक विद्या) है। **'समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः'** – वेद ऐसे विचार देता है। जो सब पर समान रूप से लागू होते हैं। जैसे कि जल, वायु जैसे प्राकृतिक पदार्थ। **'स्तुता मया वरदा वेदमाता'** – यह वेदविद्या माता की तरह ममताभरी प्रेरणा देती है और इसमें जीवन से जुड़ी आयु, प्राण, प्रजा, पशु, कीर्ति, धन, विद्या सदृश बातें बताई गई हैं। अतः प्रत्येक कल्याण की कामना वाले को इसको अपनाना चाहिए।

182–शालीमार नगर,
होशियारपुर – 146001

☞ *पृष्ठ 02 का शेष*

अमृत–पान

किसकी पूजा कर रहे हो?

भीषण गरमी थी। भूमि और आकाश तप रहे थे। एक मनुष्य एक गरमी को देख नरक की गरमी का अनुमान लगा–लगाकर भयभीत होकर बेहोश हो रहा था। दूसरा इस गरमी और नरक की गरमी का विचार करके स्वर्ग जाने की इच्छा में सिर झुकाए हुए था। हज़रत शिब्ली जहाँ भी गये, यही दृश्य देखा। कोई नरक से भयभीत होकर अल्ला–अल्ला पुकार रहा है, कोई स्वर्ग के लालच से माला फेर रहा है। हज़रत शिब्ली ने अब एक मशाल तैयार की और उसे दोनों ओर से खूब प्रकाशवान् बनाया। जब मशाल की दोनों ओर की आग भड़क उठी, तो हज़रत दौड़ने लगे। लोग चकित कि यह क्या तमाशा है? अन्ततः एक व्यक्ति ने हाथ जोड़े और हज़रत शिब्ली को सम्बोधित करके कहा–"या हज़रत! यह क्या हालत है? कहाँ जाने का विचार है?"

वे बोले– हालत जो है, वह तुम देखते हो। इच्छा पूछते हो तो वह भी सुन लो। स्वर्ग और नरक के पुण्य और पाप के विचार ने संसार में एक आफ़त मचा रखी है। जाता हूँ और दोनों को जलाकर नष्ट करता हूँ। जब तक ये दोनों वस्तुएँ नष्ट न होंगी, तब तक कोई भी निःस्वार्थभाव से ईश्वरभक्ति नहीं करेगा। अब तो अवस्था यह है–

बहुत उम्मीद जन्नत[1] (स्वर्ग) पर बहुत दोज़ख[2] (नरक) की दहशत[3] (डर) से।

कोई कमतर[4] (बहुत कम) इबादत[5] (भक्ति) खालसन्[6] (केवल) लिल्लाह[7] (परमेश्वर के लिए) करता है।।

हज़रत शिब्ली ने बिलकुल ठीक कहा है। आज उपासना करनेवालों की अवस्था पर दृष्टि दौड़ाओ। कोई–न–कोई स्वार्थ उनमें काम करता दिखाई देता है। कोई पुत्र के लिए प्रार्थना कर रहा है। किसी को धन की आवश्यकता है। कोई शत्रुओं से बचने के लिए प्रार्थना कर रहा है। किसी को और कुछ नहीं सूझा तो वह दिन–रात इस लगन में लगा है कि किसी प्रकार सारे संसार में मेरा यश फैल जाए। वह इसके लिए दिन–रात प्रार्थना करता है। बहुत–से लोग नरक और स्वर्ग के विचार से उल्टी–सीधी पूजा में लगे हैं। कितना अन्धेर है कि इन और ऐसी ही अन्य समस्त वस्तुओं के लिए पूजा हो रही है। क्या यह ईश्वर की पूजा है? क्या यह 'ओम्' की उपासना है। नहीं, और यही कारण है कि इस प्रकार की भक्ति कोई फल नहीं लाती। निष्काम भक्ति करो। भक्ति का साधारण–सा मूल्य माँगकर उसके गौरव को कम न करो। यदि निःस्वार्थभाव से ईश्वर की पूजा होगी तो उसके फल भी महान् होंगे।

.... क्रमशः

श्रावणी उपाकर्म एवं ऋषि तर्पण

● शिवनारायण उपाध्याय

स्वामी दयानन्द सरस्वती का कथन है कि संसार में ज्ञान से अधिक मूल्यावान् दूसरा कोई पदार्थ नहीं है। इसलिए ज्ञान की प्राप्ति के लिए मनुष्य को सदैव तत्पर रहना चाहिए।

राजा भतृहरि ने वैराग्य शतक में लिखा है–

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रचछन्न गुप्तं धनं,

विद्या भोग करी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः,

विद्या बन्धु जनो विदेश गमने विद्या परा देवता,

विद्या राजसु पूज्यते न तु धनंः विद्या विहीनः पशु,

अर्थ–विद्या ही मनुष्य का श्रेष्ठ स्वरूप है। छिपा हुआ सुरक्षित धन है। विद्या ही भोग और विलास को प्रदान करने वाली है। विद्या ही संसार में कीर्ति फैलानी वाली और सुख देने वाली है। विद्या गुरूओं की भी गुरू है। विदेश जाने पर विद्या ही बन्धु जनों के समान रक्षा करने वाली है। विद्या ही सर्वश्रेष्ठ देवता के समान है। राजाओं के मध्य भी विद्या की पूजा होती है धन की नहीं। विद्या विहीन नर तो पशु के तुल्य है। वेद विद्या का सागर है अतः वेदाध्ययन अत्यन्त आवश्यक है।

वेदमेकसदाभ्यस्येतपरस्तप्स्यन्द्विजोत्तमः

वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते।। ऋ. 2.141.

अर्थ– द्विजोत्तम पुरुष सर्वकाल तपश्चर्या करता हुआ वेद का ही अभ्यास करे। इस कारण ब्राह्मण को वेदाभ्यास करना इस संसार में चरम तप कहा गया है।

वेदाध्ययन की महत्ता पर यजुर्वेद 31. 18 में कहा गया है–

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्य वर्णं तमसः परस्तात्।

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।।

मैं उस महान् पुरुष को जो सूर्य के समान प्रकाश स्वरूप, अज्ञानान्धकार से पृथक् है जानता हूँ। उसको जानकर ही मनुष्य मृत्यु को जीत सकता है दूसरा कोई उपाय इसके अतिरिक्त मृत्यु को जीतने का नहीं है। इसी कारण वेदाध्ययन की महत्ता बताते हुए मनु कहते हैं–

योऽनधीत्यद्विजो वेदमन्यत्र कुरूते श्रमम्।

स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वया।। मनु. 2.143.

जो द्विज वेद को न पढ़ कर अन्य शास्त्रों के अध्ययन में श्रम करता है वह जीवित ही अपने वंश के सहित शूद्रपन को प्राप्त हो जाता है।

वेदाध्ययन का प्रारम्भ मनुष्य किस आयु से प्रारम्भ करे। इस पर स्वामी दयानन्द अपने विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में लिखते हैं– 'जन्म के पांचवें वर्ष तक माता फिर छः वर्ष से आठ वर्ष तक पिता शिक्षा करें और नवें वर्ष के प्रारम्भ में द्विज अपने सन्तानों का उपनयन करके आचार्य कुल (गुरूकुल).... में भेज दें।

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्त स्मार्त एव च।

वेद और स्मृतियों में कहा गया जो आचरण है वही श्रेष्ठ धर्म है।

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।

गर्भायेकादशेराज्ञो गर्भतु द्वादशो विशः।। मनु. 1.11

ब्राह्मण अपने बालक का गर्भ स्थापित के दिन से आठवें वर्ष के अन्त में उपनयन संस्कार करा कर, क्षेत्रिय अपने बालक का ग्यारहवें वर्ष के उपरान्त तथा वैश्य अपने बालक का बारहवें वर्ष के उपरान्त गुरुकुल में प्रवेश दिला दें। वैदिक संस्कृति में संस्कारों का बड़ा महत्त्व है। गुरूकुल में वेद का अध्ययन करने से पूर्व उपनयन संस्कार आवश्यक है। कहा जाता है–

जन्मना जायते शूद्र संस्कारात् द्विज उच्यते।

जन्म काल से तो सभी शूद्र होते हैं संस्कार होने पर द्विज बनते हैं। गुरुकुलों में श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन गुरूकुल में प्रवेश लेने वाले बालकों का उपाकर्म संस्कार होता था। उन्हें यज्ञोपवीत पहनाया जाता था।बिना यज्ञोपवीत व्यक्ति को वेदाध्ययन का अधिकार नहीं होता था। लोग दूर–दूर से अपने बालकों को लेकर गुरूकुल में आते थे। फिर गुरूकुल में एक बृहद् यज्ञ का आयोजन होता था। यज्ञ में भाग लेने के लिए दूर–दूर से विद्वत् गण, सन्यासी, धनिक लोग, राजा–महाराजा भी उत्साह पूर्वक आते थे। उपाकर्म संस्कार के उपरान्त विद्वान् सन्यासियों, गुरूकुल के आचार्यों आदि के आध्यात्मिक विषयों पर उपदेश होते थे। संस्कारों की महत्ता प्रतिपादित की जाती थी। श्रेष्ठीगण, सामन्तगण आदि गुरूकुलों को दान भी देते थे। उपाकर्म के बाद क्या होता था? इस पर अथर्ववेद का कथन है–

उपनीय गुरूः शिष्य।

शिक्षयेच्छौचमादितः।

आचारमग्नि कार्यं च सन्धयोपासनमेव च।। मनुः 2.44

गुरु शिष्य का यज्ञोपवीत संस्कार करके पहले स्वच्छता से रहने की विधि, सदाचरण और सद्व्यवहार, अग्नि होत्र की विधि और सन्ध्या उपासना की विधि सिखाये।

अथर्ववेद में बताया गया है कि उपाकर्म के बाद क्या होता है?

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।

तं रात्रोस्तिस्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमुमभिसं यन्ति देवाः। अथर्व. 11. 50.1

आचार्य ब्रह्मचारी को प्रतिज्ञा समीप रखकर तीन रात्रि पर्यन्त सन्ध्योपासनादि की शिक्षा कर उसके आत्मा के अन्दर गर्भरूप विद्या स्थापन करने के लिए उसको पूर्ण विद्वान् कर देता और जब वह पूर्ण ब्रह्मचर्य और विद्या को पूर्ण करके घर पर आता है तब उसको देखने के लिए सब विद्वान् लोग सम्मुख जाकर उसका बड़ा सम्मान करते हैं।

ब्रह्मचारी को अपने से बड़ों का सम्मान करने की शिक्षा दी जाती है।

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्यायशो बलम्।। मनु. 2.96

अर्थ–अभिवादन करने का जिसका स्वभाव और विद्या अवस्था में वृद्ध पुरूषों का जो नित्य सेवन करता है उसकी आयु विद्या कीर्ति और बल इन चारों की निरन्तर वृद्धि हुआ करती है। ब्रह्मचारी को बताया जाता है कि वेद, अग्निहोत्र आदि में कभी भी अनध्याय नहीं होता है अर्थात् ये नित्य कर्म हैं।

वेदोपकरणे चैव स्वाध्याये चैव न्यैत्य के।

नानुरोधोऽस्त्यनध्याये होम मन्त्रेषु चैव हि।। मनु. 2.80

अर्थ– वेद के पठन पाठन में और नित्य कर्म में आने वाले जप अथवा संध्योपासना में तथा यज्ञ करने में अनध्याय का विचार नहीं होता।

समावर्तन संस्कार होने तक होमादि कर्त्तव्य करने पर कहा गया है–

अग्नीन्धनं भैक्षचर्यामधः शय्यां गुरोहितम्।

आसमावर्तनात्कृतोपनयनो द्विजः।।

मनु. 2.83

यज्ञोपवीत संस्कार में दीक्षित द्विज अग्नि होत्र करना, भिक्षा वृत्ति करना, भूमि में शयन, गुरू की सेवा समावर्तन संस्कार तक करता रहे। वेदाध्ययन का पहला सत्र श्रावण मास की पूर्णिमा से उपाकर्म के साथ प्रारम्भ होकर पौष कृष्णा अमावस्या को समाप्त होता था। कालान्तर में समावर्तन संस्कार भी इसी दिन होना प्रारम्भ हो गया, इसलिए जिन ब्रह्मचारियों का वेदाध्ययन समाप्त हो जाता था, उनके माता–पिता आदि भी इस दिन उत्सव में आने लगे। इससे पर्व की दिव्यता द्विगुणित हो गई।

चिरकाल के बाद वेद के पठन–पाठन का प्रचार न्यून हो जाने पर साढ़े चार मास तक नित्य वेद–पारायण की परिपाटी लुप्त हो गई और जनता प्राचीन उपाकर्म और उत्सर्जन के स्मारक के रूप में श्रावण शुक्ला पूर्णिमा के दिन उपाकर्म और उत्सर्जन कर्म साथ–साथ ही करने लग गई। बाद में इसी कर्म को ऋषि तर्पण कहा जाने लगा। इस अवसर पर ही लोग अपने यज्ञोपवीत भी बदलने लग गए आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री के अनुसार ऋषि तर्पण यज्ञ में सम्मिलित होने के चिह्न स्वरूप याजक और यजमानों के दाहिने हाथ में रक्षा सूत्र (रक्षा बन्धन) भी बाँधे जाते हों और वर्तमान काल में रक्षा बन्धन का यही स्रोत हों।

राजपूत काल में जब देश पर मुस्लिम आक्रमणकारियों के हमले होने लगे और आक्रमणकारी लोग महिलाओं को भी लूट का माल समझने लगे तब जौहर की क्रिया प्रारम्भ हुई, साथ ही अबला महिलाओं ने वीरों के दाहिने हाथ में रक्षा सूत्र बाँधकर उनको भाई समान मान कर अपनी रक्षा की व्यवस्था की। इसी समय से बहिनों द्वारा भाइयों के हाथ में रक्षा बन्धन बाँधने की प्रथा भी प्रारम्भ हो गई और इस पर्व को रक्षा बन्धन पर्व के नाम से जाना जाने लगा। इस पर्व का वेदाध्ययन से सीधा सम्बन्ध है। श्रावणी उपाकर्म मनाने का एक मात्र उद्देश्य यह है कि इस दिन से हम वेदाध्ययन प्रारम्भ कर दें। आर्य पर्व पद्धति में सांकेतिक रूप से वेदों के प्रथम तथा अन्तिम मंत्र देकर उन्हें पढ़ने की प्रेरणा दी गई है।

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

विरासत में आर्यत्वः विचारणीय ही नहीं, करणीय

● राम निवास 'गुण ग्राहक'

किसी भी कार्य की सफलता व सार्थकता के लिए प्रारम्भ से लेकर परिणाम प्राप्त होने तक एक ऐसी क्रमबद्ध योजना पर काम करना होता है, जिसमें कठिनाइयाँ चाहे कितनी ही बड़ी हों, लेकिन कार्य को बिगड़ने या असफल होने की आशंका नाम मात्र की भी न रहे। आर्य समाज के लिए वेद विद्या के प्रचार–प्रसार के साथ संसार का उपकार अर्थात् शारीरिक आत्मिक व सामाजिक उन्नति प्रथम व अन्तिम कर्त्तव्य है। इन दोनों को मिलकर विचार करें तो सरल शब्दों में कह सकते हैं कि वेद विद्या के प्रचार–प्रसार से ही संसार का पूर्ण उपकार सम्भव है और संसार की शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति वेद विद्या के प्रचार–प्रसार से ही हो सकती है। संक्षेप में कहें तो दोनो एक दूसरे के पूरक है, एक की सफलता पर ही दूसरे की सफलता निर्भर है। हम आर्य कहलाने वालों का कर्त्तव्य कर्म और परमधर्म यही है कि हम अपने तन, मन और धन से वेद विद्या के प्रचार–प्रसार रूपी संसार के उपकार में लग जाएँ। इसके साथ यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि ऐसा करना ही हमारे जन्म और जीवन की सफलता है। इसमें तनिक भी सन्देह जिसे हो, उसके लिए आर्य समाज में कोई स्थान नहीं है।

इतना जान लेने के बाद एक बात और जान लेनी चाहिए कि चाहे वेद विद्या का प्रचार–प्रसार हो या संसार का उपकार इनमें से एक भी काम किसी धार्मिक अन्धविश्वास व सामाजिक कुरीतियों से जुड़े रह कर नहीं किया जा सकता। जिन अन्धविश्वास व कुरीतियों को समाप्त करने के लिए आर्य समाज की पहली पीढ़ी संघर्ष करती, अपना रक्त बहाती रही है, उन अन्धविश्वासों व कुरीतियों को अपने व्यक्तिगत व पारिवारिक जीवन में जीवित रखकर हम ऋषि दयानन्द के तप–त्याग व उनके बलिदान को कलंकित करने का पाप कर रहे हैं। मूर्तिपूजा, अवतार वाद, फलित ज्योतिष, तीर्थ स्थान से लेकर जन्मना जातिवाद पर आधारित ऊँच–नीच की दुर्भावना आदि दोषों को जीवन में स्थान देने वाले जो भी लोग आर्य समाज में हैं, पदों पर बैठे या प्रचार कार्य में लगे हुए हैं वे वेद विद्या व ऋषि–अभियान के सच्चे सहयोगी व मित्र तो कदापि नहीं हो सकते। जो सज्जन जाने–अनजाने में पौराणिक परम्पराओं के प्रति तनिक भी लगाव रखते हैं। वे वेद स्वाध्याय व सन्ध्योपासना संकल्प पूर्वक नित्य अनुष्ठान करके चित्त की शुद्धि व बुद्धि का संवर्धन कर लें।

चलिए अब चर्चा करते हैं कि वेद विद्या के प्रचार–प्रसार व संसार के उपकार के महान् कार्य में सच्चे हृदय से लगने वाले सज्जन तनिक यह विचार कर लें कि कहीं हमारी कार्य योजना में कोई ऐसी भूल चूक तो नहीं रह गई, जो हमारे सब प्रयासों पर पानी फेरने, हमारे सब प्रयासों को असफल बनाने का काम कर रही हो। अगर ऐसी कोई कमी है तो उसे दूर किए बिना सफलता के स्वप्न देखना भी समझदारी का काम नहीं। पुरानी पीढ़ी के सुधी आर्यजन इस दिशा में बहुत सावधान रहते थे। स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन व कार्यों की जानकारी रखने वाले जानते हैं कि उन्होंने वेद विद्या के प्रचार–प्रसार व संसार के उपकार के लिए जिस समर्पित भाव से काम किया और वे जो कुछ कर पाए उनमें उनकी कर्मठता को जितना श्रेय जाता है उतना ही उनकी दूर दृष्टि व सटीक निर्णय लेने की क्षमता को जाता है। आज हमारे कर्णधार व कार्यकर्त्ता यह भुला बैठे हैं कि किसी कार्य की असफलता में बाहरी रूकावटों व बाधाओं का उतना हाथ नहीं होता, जितना कि हमारी आन्तरिक दुर्बलताओं व कमियों के साथ–साथ कार्ययोजना में रहने वाली भूल चूकों का होता है। आर्य समाज के वेद प्रचार अभियान में सबसे बड़ी जो कमी या कमजोर कड़ी है, वह है परिवारों का आर्य विचारों व संस्कारों से सर्वथा शून्य रह जाना। चाहे हम मानने में कितनी भी आनाकानी करें, चाहे कितने ही कुतर्क दें, कड़क सच यह है कि हमारे 50–55 प्रतिशत आर्य समाजी कहलाने वाले परिवार के सभी सदस्य वैदिक विचारों व संस्कारों से ओत प्रोत नहीं हैं। मेरे 20–25 वर्ष के कार्यकाल में मुझे स्मरण नहीं कि कोई ऐसा परिवार मिला हो, जिसकी दो पीढ़ियाँ (माता–पिता व पुत्र–पुत्रियाँ) भी निष्ठावान आर्य हों। आर्य समाज से जुड़े रहने की बात करें तो ऐसे तो बहुत परिवार मिल जाएँगे, लेकिन जिसे आर्यत्त्व कहते हैं, उसका मिलना दुर्लभ ही है। मैं पुनः बता दूँ कि निष्ठावान आर्यों की कमी नहीं है लेकिन वह निष्ठा व्यक्तिगत ही है पारिवारिक स्तर पर नहीं।

आर्य परिवारों के न होने के क्या करण है तथा इसका वेद विद्या के प्रचार–प्रसार पर कैसा व कितना दुष्प्रभाव होता है, इस पर चर्चा करें तो लेख का कलेवर लघु पुस्तिका जैसा हो जाएगा। अगर इस पर कुछ भी विचार न करें तो आगे पीछे का सब कथन व्यर्थ हो जाएगा। सर्वप्रथम हम परिवारों के आर्यकरण न होने की हानियों पर चर्चा करेंगे। वैदिक संस्कृति व आधुनिक विज्ञान एक स्वर से घोषणा करते हैं कि गर्भ काल से लेकर गोदी व घर–परिवार में रहते हुए बालक–बालिकाओं के मन–मस्तिष्क पर जैसे संस्कार पड़ जाते है, वे जीवन भर उनके विचारों को प्रेरित व प्रभावित करते हुए जीवन की दिशा और दशा को बनाते–बिगाड़ते रहते हैं। हमारी आने वाली पीढ़ियों को बालकपन में श्रेष्ठ संस्कार मिलें, इसके लिए आवश्यक है कि आर्य परिवार की संस्कार वान पुत्र–पुत्रियों के परस्पर विवाह–सम्बन्ध हों। इसके लिए आवश्यक है कि हम आर्य कहलाने वाले जन्मना जाति प्रथा की परम्परागत सोच से ऊपर उठकर गुण, कर्म, स्वभाव के मेल से अपने पुत्र–पुत्रियों के विवाह सम्बन्ध करें। अभी हम जातिवादी सोच के साथ दूर देश में विवाह करने से भी डरते–बचते हैं, जबकि ऋषि दयानन्द ने दूर देश में विवाह के अमूल्य लाभ गिनाए हैं। कैसा आश्चर्य है कि ऋषि के अनुयायी ऋषि की मान्यताओं से कहीं अधिक विश्वास पौराणिक प्रवृत्तियों में रखते हैं। वाणी में ऋषि दयानन्द और व्यवहार में पुराण पन्थी को लेकर आर्यत्त्व का विस्तार कोई कैसे कर सकेगा? सच पूछो तो आर्य समाज जिस वैदिक विचार धारा को लेकर 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' को साकार करना चाहता है, उसमें सबसे बड़ी रूकावट ही यही है कि हम इसे पारिवारिक स्तर पर साकार नहीं कर सके। जो परिवार को आर्य बनाने के लिए प्रयत्न नहीं करना चाहते, वे विश्व को आर्य बनाने का नारा लगाएँ तो यह 'सूत न पौनी कोरिया से लठ्टम लठ्टा' कहावत को चरिवार्थ करने जैसा ही माना जाएगा।

आज आप आस–पास दृष्टि दौड़ाकर देख लें कि लोगों के लिए पुत्र–पुत्रियों के विवाह करने कितने कठिन हो गए हैं। दहेज के दानव की भी बात न करें तो भी वैवाहिक सम्बन्ध के समय दोनों पक्षों के मन में यही आशंका रहती है लड़के या लड़की के स्वभाव में कोई खोट निकला तो जीवन भर का रोना हो जाएगा। पहले यह चिन्ता पुत्री के पिता को अधिक रहती थी, मगर आज शासन और संविधान दोनों नारियों के प्रबल पक्षधर हो जाने के कारण पुत्र का पिता अधिक चिन्तातुर रहता है। लड़की थोड़ी सी आधुनिका हुई, तुनक मिजाज हुई तो पूरे परिवार को जेल की हवा खानी पड़ सकती है। ऐसे में आर्य परिवारों के गुण, कर्म, स्वभाव मिलाकर विवाहों की सम्भावना बनती है तो सबको सब प्रकार का सुख लाभ रहेगा। हमारी पहली–दूसरी पीढ़ी के आर्य पुरुषों ने इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया। स्वामी–श्रद्धानन्द ने अपने सब पुत्र–पुत्रियों के विवाह प्रचालित जाति प्रथा से ऊपर उठकर आर्य विचारधारा के मेल देखकर किए। हमारा सैकड़ों आर्य पुरुषों ने माता–पिता व समाज के विरोध की भी चिन्ता न करके जाति बन्धन तोड़ कर वैवाहिक सम्बन्ध किए। आज भी हमारे उदारचेता आर्य विद्वान् जन्मना जाति प्रथा के ऊपर उठकर स्व पुत्र–पुत्रियों के विवाह कर रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि सच्चे ऋषि भक्ति आर्य जन थोड़ा और साहस दिखाएँ, आर्य पत्र–पत्रिकाओं में जाति बन्धन रहित वैवाहिक सम्बन्धों के विज्ञापन दें। ऐसा करने से जहाँ सामाजिक क्रान्ति का सूत्रपात होगा,वहीं परिवारों के आर्य करण की प्रवृत्ति बढ़ेगी। विवाह पूर्व ही आर्य विचारों व उत्तम संस्कारों से ओतप्रोत वर–वधु जिस भावी पीढ़ी का निर्माण करेंगे तो निश्चित रूप से वह पीढ़ी हमसे कहीं अधिक सिद्धान्त निष्ठ होगी। गर्भावस्था से ही जिनको वैदिक संस्कार मिलेंगे, परिवार में पञ्च महायज्ञों से सुवासित वातावरण मिलेगा तो निःसन्देह उनके जीवन में आर्यत्त्व कहीं अधिक प्रखरता से प्रकट होगा। हमारी भावी पीढ़ी में उत्तरोत्तर आर्यत्व अधिकाधिक मात्रा में निखरता रहे तो यह हम सबके साथ–साथ संसार का भी सौभाग्य उदय होगा। ऋषि दयानन्द के सपने को अपने कमजोर कन्धों का सहारा देकर यदि हम एक संस्कार वान पीढ़ी का निर्माण करके उनके सबल कन्धों पर रख देंगे तो यह हमारा सर्वोपरि सौभाग्य होगा। आर्यो! तनिक साहस दिखाओ और एक नया इतिहास बना डालो।

मो. 7597894991

वरिष्ठ नागरिकों के लिए शुभ सूचना

आयुधाम सोसायटी सीनियर सिटीजन होम नई दिल्ली जो पिछले 25 वर्षो से वृद्ध लोगों के लिए सेवा का कार्य कर रही है, आयुधाम सोसायटी में नवीन भवन निर्माण के माध्यम से वरिष्ठ नागरिकों के लिए आवासीय सुविधा का विस्तार किया गया है। आप सभी से अनुरोध है कि वरिष्ठ नागरिकों को रहने की जरूरत महसूस हो तो आप उन्हें यहाँ पर आने की प्रेरणा दें। अगर आप या आपके साथियों को भी रहने की आवश्यकता हो तो आपका भी स्वागत है। रजिस्ट्रेशन फार्म उपलब्ध है। सम्पर्क सूत्रः श्री अशोक आनन्द मो. नं. 9654783140 अथवा श्री आर.पी. रहेजा मो. न., 9717054558

स्वर्ग खाली पड़ा है

● प. वेदप्रकाश शास्त्री

आर्य जगत् 16 जुलाई, 2017 के अंक में पृष्ठ 3 पर महात्मा आनन्द स्वामी जी की कथा ''अमृतपान'' के अर्न्तगत उपशीर्षक ''स्वर्ग खाली पड़ा है'' प्रकाशित हुआ है। स्वर्ग क्यों खाली पड़ा है? इसका उत्तर भी बड़ी छानबीन के बाद नारद के द्वारा दिया गया है कि कोई स्वर्ग जाना ही नहीं चाहता क्योंकि लोग सांसारिक मोह माया को छोड़ ही नहीं पाते। बात ठीक है, पते की है। भक्ति की नहीं, माया छोड़ी नहीं तो स्वर्ग खाली ही रहेगा। भला कोई कैसे जा सकेगा?

परन्तु स्वर्ग न जा सकने का यही एक कारण नहीं है। इसके अन्य कारण भी हो सकते हैं। नारद जी ने स्वर्ग के सब्जबाग दिखाए जो जरूर हैं लेकिन पूर्णतः सत्य नहीं हैं। स्वर्ग की एक और घटना देखिए–

एक व्यक्ति ने अच्छे कर्म किए, स्वर्ग पहुँच गया। उसने देखा– स्वर्ग और नरक के बीच में बस एक छोटी सी दीवार है। दीवार की ऊँचाई कम होने से स्वर्ग से नरक का दृश्य पूरी तरह साफ नजर आ रहा था। पर स्वर्ग में अकेला था। नरक में काफी भीड़ थी, चहल–पहल थी। लोग खुश थे। इसी उधेड़बुन में दोपहर हो गई। भोजन बनने लगा। उसने देखा , उधर से भिन्न–भिन्न प्रकार के व्यंजनों की सुगन्धित आ रही है। इसके मुंह में भी पानी आ गया। सोचने लगा–यहाँ तो नरक से भी अधिक सुगन्धित और स्वादिष्ट भोजन आएगा।

स्वर्गीय व्यक्ति अभी यह सोच ही रहा था कि बैरा भोजन की थाली लेकर पहुँच गया। थाली देखी तो हैरान रह गया। बोला– ''यह क्या, रोटी दाल?'' बैरे ने उत्तर दिया– ''मेरे पास ज्यादा समय नहीं है, उधर भी जाना है। एक आदमी के लिए तरह–तरह के व्यंजन नहीं बन सकते। जिह्वा पर संयम रखिए। एक बात और, खाना है तो खाइए, नहीं तो देखते रहिए अथवा नरक के सुगन्धित भोजन और खुशनुमा माहौल को देखकर अपने को कोसते रहिए।''

स्वर्गीय व्यक्ति मन मसोस कर रह गया। मरता क्या न करता?

देखा स्वर्ग का हाल? स्वर्ग की स्वर्गीय व्यवस्था! यह दुर्दशा देखकर भला स्वर्ग कौन जाना चाहेगा? इससे तो नरक ही अच्छा है जहाँ कम से कम भोजन तो ठीक–ठाक मिल जाएगा।

अतः स्वर्गीय आनन्द को प्राप्त करने के इच्छुक जन सावधान हो जाएँ। कहीं ऊँची दुकान फीका पकवान वाली स्थिति न उपस्थित हो जाए। नाम बड़े दर्शन थोड़े की कहावत चरितार्थ न हो जाए। यदि फँस गए तो लेने के देने पड़ जायेंगे। पछताना पड़ेगा। अन्ततः हाथ मलने के अलावा और कुछ हाथ न लगेगा। लोग यही कहेंगे– चौबे चले छब्बे बनने को , रह गए दूबे। अतः सावधान हो जाइए।

यदि कोई सज्जन स्वर्ग पहुँचें तो वाट्सएप का लाभ उठाते हुए वहाँ की वर्तमान स्थिति का विवरण अवश्य भेजें। जिससे पता चले कि कुछ सुधार भी हुआ है या नहीं? अथवा टी.वी. मीडिया चैनलों को वहाँ की यथार्थ स्थिति का वीडियो बना कर डाउनलोड कर दें। मीडिया वाले स्वयं वहाँ आकर वस्तु स्थिति का खुलासा कर देंगे। आजकल ये भी सच्ची–झूठी खबरों की यथार्थता को उजागर करने में पीछे नहीं हैं। जोखिम उठाकर भी खबर की तह में पहुँचने का प्रयत्न करते हैं। इसके लिए वे प्रशंसा के पात्र हैं।

हाँ, एक बात अवश्य है, मीडिया वाले अभी तक चोटियाँ कटने–काटने के रहस्य का पता लगाने में सफल नहीं हो सके है। प्रयत्नशील अवश्य हैं।

यदि नारदजी को एक बार इस मृत्यु लोक में भेजने के लिए विष्णु भगवान से प्रार्थना करें तो महती कृपा होगी। शायद नारद जी ही कोई निदान निकाल सकें। उत्तर की प्रतीक्षा में।

4–E, कैलाश नगर, फाजिलका, पंजाब 09463428299

☞ पृष्ठ 04 का शेष

श्रावणी उपाकर्म ...

अब इस विषय को यहीं विराम देकर ऋग्वेद में इस पर्व के विषय में परोक्ष रूप से जो कुछ कहा गया है उसका पाठकों को परिचय दे रहा हूँ। सबसे अत्यन्त महत्वपूर्ण बात तो यह है कि वेद में शिक्षा सभी के लिए है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, चाण्डाल स्त्रियाँ आदि सम्पूर्ण मानव समाज के लिए वेद का अध्ययन निर्बाध रूप से खुला हुआ है। यजुर्वेद अध्याय 26 मंत्र 2 में स्पष्ट कहा गया है।

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानी जनेभ्यः।

ब्रह्मराजन्यभ्यां शूद्राय चार्याय चस्वाय चारणाय च।

अर्थ– परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) मनुष्य यात्रा के लिए (इमाम्) इस (कल्याणीम्) सबका कल्याण करने वाली और मुक्ति का सुख देने वाली (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आ वदानि) उपदेश करता हूँ। इस वेद वाणी का उपदेश ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, वैश्य, सेवक, स्त्री और चाण्डाल तक तुम भी वैसे ही किया करो।

यह वर्षा ऋतु के मध्य में मनाया जाने वाला पर्व है। ऋग्वेद मण्डल 7 सूक्त 103 से इस पर्व को मनाने की प्रेरणा प्राप्त हुई है। पाठकों के लिए हम संक्षेप में ऋग्वेद में दिये गये विवरण से परिचित कर रहे हैं।

दिव्या आपो अभि यदेन मायन्दृतिं शुष्कं सरसी शयानम्

गवामह न मन्युर्वत्सि नीनां मण्डूकानां वग्नूरत्रा समेति।। ऋ. 7.103.2

भावार्थ– इस ऋचा में यह दर्शाया गया है कि वर्षा ऋतु के साथ मेंढक आदि जीवों का ऐसा घनिष्ट सम्बन्ध है कि जैसा इन्द्रियों का इन्द्रियों की वृत्ति के साथ होता है। जैसे इन्द्रियों की यथार्थ ज्ञानरूप प्रमादि वृत्तियां इन्द्रियों का मण्डन करती हैं इसी प्रकार से ये मेंढक वर्षा ऋतु का मण्डन करते हैं। प्रकृति रूप बीज से ही ये उत्पन्न हो जाते हैं परन्तु इसके बाद मैथुन से ही आगे उत्पत्ति क्रम चलता है।

यदिमेनां उशतो अभ्य वर्षीत्तृष्यावतः प्रावृष्यागतायाम्।

अख्खलीकृत्या पितरं न पुत्रो अन्यो अन्यमुप वदन्तमेपि।।3।।

भावार्थ–वर्षा ऋतु में से जीव ऐसे आनन्द से विचरते हैं और अपने भावों को अपनी चेष्टा तथा वाणियों से दर्शाते हुए पुत्रों के समान अपने वृद्ध पितरों के पास जाते हैं। इसमें यह शिक्षा भी दी है कि जैसे क्षुद्र जीव जन्तु भी अपने वृद्धों के पास जाकर अपने भाव प्रकट करते हैं वैसे हमें भी अपने वृद्धों के पास अपने भावों को प्रकट करना चाहिए।

अन्यो अन्यमनु गृम्णात्येनोरपां प्रसर्गेसदमं दिशाताम्।

मण्डूको पदभिवृष्टः कनिष्कन्यृश्निः संपृक्ते हरितेन वाचम्।।4।।

भावार्थ–परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे जीवों। तुम प्रकृति सिद्ध वर्षा आदि ऋतुओं में नूतन–नूतन भावों के ग्रहण करने वाले जल जन्तुओं से शिक्षा प्राप्त करो कि वे जिस प्रकार हर्षित होकर उद्योगी बनते हैं वैसे ही तुम भी उद्योगी बनो।

यदेशामन्यो अन्यस्य वाचं शाक्तस्येन वदति शिक्षमाणः।

सर्वतदेषां समृधेव पर्व यत्सुवाचो वदथनाध्यप्सु।।5।।

भावार्थ–परमात्मा उपदेश करते हैं कि जिस प्रकार जल जन्तु भी एक दूसरे की चेष्टा से शिक्षा लाभ करते हैं और एक ही भाषा सीखते हैं वैसे तुम ही परस्पर मिलकर शिक्षा लाभ लेते हुए एक प्रकार की भाषा में बातचीत किया करो।

गोमायुरेको अजमायुरेकः पृश्निरेको हरित एक एषाम्।

समानं नाम विभ्रतो विरूपाः पुरूत्रावाचं पिपि शुर्वदन्त।।6।।

भावार्थ–परमात्मा उपदेश करते हैं कि जिस प्रकार जन्तु भी स्वर भेद, आकारभेद और वर्ण वेद रखते हुए जाति भेद और वाणी भेद नहीं रखते हैं इसी प्रकार से हे मनुष्यों। तुम प्राकृत जीवों से शिक्षा लेकर वाणी और जाति का एकत्व दृढ़ करो।

अब एक ऋचा और देकर विषम को विराम देगें।

ब्राह्मणासो अतिरात्रे न सोमे सरोन पूर्वमभितो वदन्तः।

संवत्सरस्य तदहः परष्ठि यन्मण्डूकाः प्रावृणीणं बभूव।।7।।

इस ऋचा में परमात्मा ने वैदिकोत्सव मनाने का उपदेश दिया है। कहा है कि मनुष्यों तुम वर्षा ऋतु में प्रकृति के मनमोहक दृश्य को देखकर वैदिक सूक्तों से उपासना करो।

आर्य समाज ने परमात्मा के इस संदेश को ठीक से समझकर वर्षा ऋतु के ठीक मध्य में श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को श्रावणी उपाकर्म मनाकर फिर एक सप्ताह वेद प्रचार के लिए नियम कर दिया है। इति शम्।

शास्त्री नगर, दादाबाड़ी–कोटा

पूर्ण छः हैं, उनकी संक्षिप्त व्याख्या

● खुशहाल चन्द्र आर्य

सृष्टि में हम जो कुछ देखते हैं, सृष्टि सम्बन्धी हम जो कुछ पढ़ते हैं या अनुभव करते हैं, उनमें केवल छः तत्त्व या पदार्थ ही पूर्ण हैं। बाकी सब अपूर्ण हैं। पूर्ण वह होता है, जिसमें हम न कुछ जोड़ सकें और न कुछ घटा सकें, ऐसी सभी वस्तुएँ पूर्ण कहलाती हैं। वे छः हैं जिनके नाम (1) ईश्वर (2) जीव (3) प्रकृति (4) ईश्वर की बनाई सृष्टि (5) प्रलय (6) ईश्वर के बनाए वेद। इन सब की अलग–अलग व्याख्या इसी भाँति।

1. ईश्वर : – ईश्वर स्वयं में तो पूर्ण है ही और इसका ज्ञान भी पूर्ण है, इसलिए इसकी बनाई समस्त वस्तुएँ भी पूर्ण हैं। कारण है कि जिसका ज्ञान पूर्ण होता है उनकी कृति भी पूर्ण होती है। साथ ही ईश्वर अनादि व अनन्त है यानि ईश्वर का न कोई आरम्भ है और न कोई अन्त है। जीव या मनुष्य अल्पज्ञ है इसलिए उसकी कृति भी पूर्ण न होकर अपूर्ण होती है। उसमें कम व अधिक होने की सम्भावना बनी रहती है। ईश्वर पूर्ण के अतिरिक्त सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर व निराकार भी है। स्वभाव के हिसाब से वह दयालु, परोपकारी, न्यायकारी व करूणा का सागर है। ईश्वर के मुख्य छः काम हैं। (1) सृष्टि की रचना करना (2) उसका पालन करना (3) समय पर उनको नष्ट करके प्रलय करना (4) प्रलय में जीवों व परमाणुओं की सुव्यवस्था बनाए रखना (5) मनुष्य के किए हुए अच्छे व बुरे कर्मो का यथावत्–अच्छे कर्मों का सुख के रूप में, बुरे कर्मों का दुःख के रूप में फल देना (6) सृष्टि के आदि में वेद–ज्ञान चार ऋषियों के मुख से दिलवाना जिसके अनुसार चलने से मनुष्य चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम को धर्मानुसार करते हुए मोक्ष प्राप्त कर सके। इसी उद्देश्य से ईश्वर वेद–ज्ञान देता है।

2. जीवः– जीव भी ईश्वर की भाँति अनादि व अनन्त है परन्तु अल्पज्ञ होने से इसकी कृति अपूर्ण है किन्तु जीव स्वयं में पूर्ण है। यहाँ यह समझने की बात है कि जीव या मनुष्य की आत्मा अनादि व अनन्त है और पूर्ण भी है परन्तु मनुष्य का शरीर पूर्ण है, कारण ईश्वर की कृति है परन्तु अनादि व अनन्त नहीं है। बनता व मिटता रहता है। आत्मा कभी नहीं मरती परन्तु वह अनेक शरीर धारण करती रहती है। जीव दो किस्म की योनियों में प्रवेश होता है जो भोग के साथ–साथ कर्म योनि भी है। भोग योनि में किए हुए कर्मों का फल नहीं मिलता और कर्म योनि में किए हुए कर्मो का कर्मों के अनुसार अच्छा या बुरा फल मिलता है। कर्म भी दो किस्म के होते हैं। एक स्वाभाविक कर्म दूसरा नैमित्तिक कर्म। स्वाभाविक कर्म ईश्वर–प्रदत्त होते हैं जैसे खाना–पीना, सोना–जागना, उठना–बैठना व सन्तान पैदा करना आदि। इन कर्मों का फल नहीं मिलता। यह कर्म पशु–पक्षियों में अधिक होता है। दूसरा कर्म नैमित्तिक। यह कर्म सीखाने से सीखा जाता है, बिना सिखाए नहीं आता। यह कर्म मनुष्य में अधिक होता है। इस कर्म का ईश्वर फल देता है यानि बुरे कर्म का फल दुःख के रूप में और अच्छे कर्म का फल सुख के रूप में ईश्वर देता है। मनुष्य की प्रवृत्ति सुख पाने की होती है इसलिए मनुष्य को अच्छे कर्म दया, करुणा व परोपकार के करने चाहिए।

3. प्रकृति :– प्रकृति भी अनादि व अनन्त है, परन्तु यह ईश्वर और जीव की भाँति चेतन नहीं है, जड़ है। यानि अचेतन या गतिहीन है। यह स्वयं में कोई काम नहीं कर सकती। ईश्वर या जीव इससे काम करवाते हैं परन्तु यह पूर्ण है। इसमें कम या अधिक नहीं हो सकता। प्रकृति का तात्पर्य परमाणु होता है, जिनको मिला कर ईश्वर सृष्टि बनाता है। ईश्वर की सृष्टि अन्दर से होती है, वह बनाता हुआ नहीं दिखता। जैसे मनुष्य का शरीर अन्दर से बनता है तभी बचपन, यौवन व वृद्ध अवस्था आती है। मनुष्य बाहर से बनाता है। जैसे कोई मकान बनाता है तो दिखाई देता है।

4. सृष्टि :– सृष्टि भी पूर्ण है कारण यह पूर्ण ज्ञानवान् ईश्वर की बनाई हुई है। पूर्ण ज्ञानवान् की कृति भी पूर्ण होती है। सृष्टि में पशु–पक्षी, कीट–पतंग, मनुष्य, पेड़–पौधे, नदी–नाले, पहाड़–जंगल सभी आते हैं। ये सभी अपने आप में पूर्ण हैं। जैसे मनुष्य का शरीर पूर्ण है, इसमें कोई कमी नहीं है। शरीर में न कुछ घटा सकते हैं और न कुछ बढ़ा सकते हैं। जैसे आँखें दो हैं तो दो ही ठीक हैं। न तीन और न एक होनी उचित है। इसलिए सृष्टि अपने आप में पूर्ण है।

5. प्रलय :– यह अपने आप में पूर्ण है और ईश्वर की व्यवस्था में रहती है। प्रलय में सभी जीव सुषुप्त अवस्था में रहते हैं और परमाणु बिखरे हुए रहते हैं। इसकी अवधि भी सृष्टि के समान चार करोड़ बत्तीस लाख की होती है। इसके बाद जीव कर्मों के अनुसार क्रमशः धरती पर जन्म लेता है और सृष्टि पुनः चालू हो जाती है। जो सब से उत्तम चार आत्माएँ होती हैं, वे मनुष्यों की उत्पत्ति के बाद चार ऋषियों के रूप में पैदा होते हैं जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा होते हैं और उनके मुखों से ईश्वर चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद क्रमशः उच्चारित करवाता है। उस समय जो उत्तम आत्माएँ होती हैं वे पहले जन्म लेती हैं। फिर उत्तमता के अनुसार क्रमशः आत्माएँ जन्म लेती रहती हैं और सृष्टि चलती रहती है।

6. वेद :– जैसा ऊपर लिख चुके हैं कि मनुष्य उत्पत्ति के आरम्भ में ईश्वर ने चार ऋषियों के मुख से चार वेद कहलवाए, वे भी पूर्ण हैं। कारण ईश्वर का ज्ञान पूर्ण होने से, उसके बनाए चारों वेद का ज्ञान भी पूर्ण है। वेदों में ईश्वर ने मनुष्यों को क्या काम करने चाहिए और क्या काम नहीं करने चाहिए, यह दर्शाया है। यदि मनुष्य अपने जीवनभर वेदों के अनुसार चले तो वह धर्म, अर्थ, काम को धर्मानुसार करते हुए मोक्ष को प्राप्त कर सकता है जो जीव का अन्तिम लक्ष्य है।

180 महात्मा गान्धी रोड़
(दो तल्ला) कोलकता–700007
मो. 9830135794

श्री उदयवीर विराज नहीं रहे

दिनाँक 4 अगस्त को श्री उदयवीर विराज ने अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में अन्तिम साँस ली। उन्होंने आर्य जगत् पत्रिका का वर्ष 2004 से अनेक वर्षों तक सम्पादन किया। उनके पिताजी श्री नारायण राव थे। उनका जन्म 7 नवंबर 1921 में ग्राम मोहाना जिला बुलन्दशहर (उ.प्र.) में हुआ। उनकी शिक्षा गुरुकुल कांगड़ी से हुई तथा एम.ए. (हिन्दी) आगरा से किया।

सन् 1939 में निजाम हैदाराबाद राज्य द्वारा बहु संख्यक प्रजा के नागरिक अधिकारों को कुचलने के विरोध मे किए गये सत्याग्रह में छह–छह मास के तीन बार कारावास में गए। सन् 1990 मे राम जन्म भूमि आन्दोलन में कुछ समय उन्नाव जेल में निवास किया।

उनकी अभिरुचि वन भ्रमण, पर्यटन और फोटोग्राफी थी उनकी 'वनराज के राज' तथा अन्य रचनाओं के लिए उत्तर प्रदेश सरकार तथा हिन्दी अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया। 'विश्व की शौर्य गाथाएँ' रचना पाठकों के लिए प्रेरणादायक है।

आर्य जगत् श्री उदयवीर विराज के निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करता है तथा उनकी आत्मा की शांति के लिए परमपिता से प्रार्थना करता है।

–सम्पादक

अकल्पनीय परमात्मा के अकल्पनीय ब्रह्माण्ड का वैज्ञानिक चिन्तन

● ओम प्रकाश आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में 'ब्रह्म' शब्द की सिद्धि करते हुए इस शब्द की उत्पत्ति "बृह, बृहि" धातु से बतायी है जिसका अर्थ होता है वृद्धि। वे लिखते हैं– "जो सबके ऊपर विराजमान, सबसे बड़ा, अनन्तबलयुक्त परमात्मा है, उस ब्रह्म को हम नमस्कार करते हैं। वे लिखते करते हैं– "निरन्तर व्यापक होने से परमेश्वर का नाम 'ब्रह्म' है।" वे पुनः लिखते हैं– **"योऽखिलं जगन्निर्माणेन बर्हति वर्द्धयति स ब्रह्मा,"** अर्थात् जो सम्पूर्ण जगत् को रच के बढ़ाता है इसलिए परमेश्वर का नाम 'ब्रह्मा' है।"

ब्रह्म + अण्ड अथवा ब्रह्मा + अण्ड = ब्रह्माण्ड। इसका अर्थ हुआ– ब्रह्म का अण्डा। अण्डे से क्या उत्पन्न होता है? प्राणी। ब्रह्म का अण्डा क्या है? ब्रह्म का अण्डा है– नाना दृश्य–अदृश्य लोक–लोकान्तर। इन्हीं लोक–लोकान्तरों में प्राणियों की उत्पत्ति व स्थिति होती है। ये अण्डे कितने हैं? हम इनकी कल्पना नहीं कर सकते। इसलिए इनके लिए असंख्य शब्द उचित है। समस्त लोक–लोकान्तर को ब्रह्माण्ड कहा गया है। वेद भगवान कहते हैं–

एते सोमास आशवो रथा इव प्र वाजिनः।
सर्गाः सृष्टा अहेषत्।।

ऋ.9/22/1

पदार्थ– "(एते सोमासः) यह परमात्मा (रथा इव) विद्युत के समान (आशवः) शीघ्रगामी है और (प्रवाजिनः) अत्यन्त बलवान है (सर्गाः अहेषत्) उसने सृष्टियों को शब्दायमान रचा है।"

भावार्थ– "परमात्मा में अनन्त शक्तियाँ पाई जाती हैं, उसकी शक्तियाँ विद्युत के समान क्रिया प्रधान है, उसने कोटानुकोटि ब्रह्माण्डों को रचा है, जो शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध इन पाँच तन्मात्राओं के कार्य हैं और इनकी ऐसी अचिन्त्य रचना है जिसका अनुशीलन मनुष्य मन से भी भलीभाँति नहीं कर सकता।"

इस मंत्र के कहने का तात्पर्य यह है कि ब्रह्माण्ड कोटानुकोटि हैं अर्थात् इनकी संख्या अनन्त है। ये गणना से परे हैं क्योंकि न जाने कितने ब्रमाण्ड हैं जो दूरवीक्षण यंत्र से भी नहीं देखे जा सकते। ये समस्त ब्रह्माण्ड शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध इन पंचतन्मात्र या पाँच सूक्ष्मभूतों के परिणाम हैं। ये सूक्ष्मभूतों से बने हुए हैं। असंख्य और आँखों से न दिखलाई पड़ने के कारण इनकी संख्या का अनुमान हम मन से नहीं कर सकते। इनकी अनन्ता पर विचार करने पर मनुष्य का मन चकरा जाता है। ये तो मन की गति की पहुँच से भी बाहर है। इतना होते हुए ये सभी क्रियाप्रधान हैं क्योंकि ये सब द्रव्य हैं। द्रव्य उसको कहते हैं, जिसमें क्रिया, गुण और केवल गुण भी रहे।। देखें सत्यार्थ प्रकाश तृ. समु–।। समस्त सृष्टि शब्दायमान है अर्थात् इन सृष्टियों में शब्द है। शब्द किसका हो सकता है? शब्द हो सकता है– प्राणियों का। इससे यह अर्थ ध्वनित हो रहा है कि पृथ्वी के अलावा अन्य लोकों में प्राणियों का निवास है क्योंकि परमात्मा की सृष्टि निरूद्देश्य नहीं हो सकती। वेद भगवान कहते हैं–

एते पूता विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः।
विपा व्यानशुर्धियः।।

ऋ. 9/22/3

पदार्थ– "(पूताः) पवित्र (एते सोमासः) ये सब उत्पन्न हुए ब्रह्माण्ड (दध्याशिरः) सबके धारक आश्रयभूत (विपा) ज्ञान द्वारा (विपश्चितः) विद्वानों की (धियः) बुद्धि का (व्यानशुः) विषय होते हैं।"

भावार्थ– "परमात्मा की रचना में कोटानुकोटि ब्रमाण्ड हैं वे सब ज्ञानी–विज्ञानियों की ही समझ में आ सकते हैं अन्यों की नहीं।"

वेदमंत्र कह रहा है कि ब्रह्माण्ड कोटानुकोटि हैं अर्थात् इनकी संख्या का पता करना मनुष्य की कल्पनाशक्ति से परे है। इन सबका आश्रयभूत परमात्मा है। विद्वान् जन ही इस रचना को समझ सकते हैं अज्ञ नहीं समझ सकते हैं। विद्वान्जन ही इसके बारे में चिन्तन कर सकते हैं क्योंकि परमात्मा की सारी रचना बुद्धिपूर्वक हैं। वेद भगवान कहते हैं–

एते पृष्ठानि रोदसोर्विप्रयन्तो व्यानुशः।
उतेदमुत्तमं रजः।। ऋ. 9/22/5

पदार्थ– "(एते) ये सब नक्षत्रादि (रोदसोः पृष्ठानि) पृथिवी और द्युलोक के मध्य में (विप्रयन्तः) चलते हुए (इदं उत्तमं रजः) इस उत्तम रजोगुण को (उत व्यावशुः) व्याप्त होते हैं।"

भावार्थ– "उक्त ब्रह्माण्डों की विविध रचना में परमात्मा ने इस प्रकार का आकर्षण और विकर्षण उत्पन्न किया है कि जिसमें एक–दूसरे के आश्रित होकर वे प्रतिक्षण गतिशील बन रहे हैं। वा यों कहो कि सत्व, रज और तम प्रकृति के ये तीनों गुण अर्थात् प्रकृति की ये तीनों अवस्थाएँ जिस प्रकार एक–दूसरे का आश्रयण करती हैं, इस प्रकार एक–दूसरे को आश्रयण करता हुआ प्रत्येक ब्रह्माण्ड इस नभोमण्डल में वायुवेग के उत्तेजित तृण के समान प्रतिक्षण चल रहा है, कोई स्थिर नहीं है।"

भाव यह है कि ब्रह्माण्डों में आकर्षण और विकर्षण है। आकर्षण और विकर्षण के कारण ये एक निश्चित दूरी पर आश्रित होकर गतिमान हो रहे हैं। कोई भी ब्रह्माण्ड स्थिर नहीं है। सब हवा के वेग से हिलते हुए तृण के समान चल रहे हैं। इन सबकी गतिरचना में परमात्मा की बुद्धिमत्ता समाविष्ट है। वेद भगवान कहते हैं–

सोमा असृग्रमाशवो मधोर्मदस्य धारया।
अभि विश्वानि काव्या।।

ऋ. 9/23/1

पदार्थ– "(सोमाः) अनन्त प्रकार के कार्यरूप ब्रह्माण्ड (मधोः मदस्य) प्रकृति के हर्षजनक भावों की (धारया) सूक्ष्म अवस्था से (आशवः) शीघ्र गति वाले (असृग्रम) बनाए गए हैं और (अभि विश्वानि काव्या) तदनन्तर सब प्रकार के वेदादि शास्त्रों की रचना हुई।"

भावार्थ– "परमात्मा ने प्रकृति की सूक्ष्मावस्था से कोटि–कोटि ब्रह्माण्डों को उत्पन्न किया और तदनन्तर उसने विधि निषेधात्मक सब विद्याभण्डार वेदों को रचा।"

वेद कहता है कि कोटि–कोटि ब्रह्माण्ड प्रकृति की सूक्ष्मावस्था से स्थूलावस्था में आए हैं। कोटि–कोटि ब्रह्माण्ड का अर्थ है– असंख्य ब्रह्माण्ड। इनकी गणना मनुष्य की बुद्धि से परे है। कारण यह है कि नभोमण्डल को देखकर और उनकी दूसरी और बृहता पर चिन्तन करने पर बुद्धि चकरा जाती है। अकल्पनीय ब्रह्माण्ड अकल्पनीय परमात्मा की अकल्पनीय प्रमाण हैं। इन्हें देखकर उस परमात्मा का सहज ही अनुमान किया जा सकता है। वेद भगवान कहते हैं–

सोमो अर्षति धर्णसिर्दधान इन्द्रियं रसम्।
सुवीरो अभिशस्तिपाः।।

ऋ. 9/23/5

पदार्थ– "(सोमः) सब पदार्थों का उत्पत्ति स्थान यह ब्रमाण्ड (अर्षति) गति कर रहा है (धर्णसि) सबके धारण करने वाला है और (इन्दियं रसम्) इन्द्रियों के शब्दस्पर्शादि रसों को (दधानः) धारण करता हुआ विराजमान है उसका (सुवीरः) सर्वशक्तिमान परमात्मा (अभि शस्तिपाः) सब ओर से रक्षक है।"

भावार्थ– "जो ब्रह्माण्ड कोटि–कोटि नक्षत्रों को धारण किए हुए हैं और जिनमें नाना प्रकार के रस उत्पन्न होते हैं उनका जन्मदाता एकमात्र परमात्मा ही है अन्य कोई नहीं।"

वेद कहता है कि ब्रह्माण्ड कोटि–कोटि नक्षत्रों को धारण किए हुए हैं अर्थात् दृश्यादृश्य सौरमण्डल या दृश्यादृश्य आकाशगंगा में जितने लोका–लोकान्तर हैं उन सबको ब्रह्म का अण्डा कह सकते हैं। जिस प्रकार मुर्गी अण्डे देती है। उस अण्डे से जीवधारी निकलता है। उसी प्रकार ब्रह्म के अण्डे सारे जड़ पिण्ड हैं। इनकी अनन्त संख्या है। हमारे चिन्तन से ये बहुत दूर हैं। इन ब्रह्माण्डों की कल्पना अग्र लिखित वैज्ञानिक चिन्तन के आधार पर करने का प्रयत्न करें–अगर प्रकाश की गति से अन्तिरक्ष की यात्रा सम्भव हो जाए तो कब कहाँ पहुँचेंगे? प्रकाश की गति यानी लगभग 30 करोड़ मीटर प्रति सेकेण्ड। इस गति से यात्रा करने पर चन्द्रमा पर पहुँचने में 1.28 सेकेण्ड का समय लगेगा। मंगल पर पहुँचने में 4.36 मिनट, शनि पर पहुँचने में 1.18 घण्टे का समय लगेगा। सूर्य का सबसे करीबी तारा प्रॉक्सिमा सेंचुरी पर पहुँचने में 4.3 साल लगेंगे। जीवन का सबसे अधिक उम्मीद वाला ग्रह वोल्फ 1061 सी पर पहुँचने में 13.78 साल का समय लगेगा। मिल्की वे का केन्द्र गैलेक्सी पर पहुँचने में 30,000 साल लगेंगे। 1000 गैलेक्सियों का समूह कॉमा क्लस्टर तक पहुँचने में 1.038 बिलियन साल लगेंगे। देखे जा सकने वाले ब्रह्माण्ड के छोर तक पहुँचने में 46.5 बिलियन साल लगेंगे। (राजस्थान पत्रिका 13–12–2016)

राजस्थान पत्रिका 22'–11–2016 के अनुसार वैज्ञानिकों ने पृथ्वी से 340 प्रकाश वर्ष की दूरी पर एक नए ग्रह की खोज की है जो तीन तारों की परिक्रमा करता है और इस ग्रह पर हर दिन तीन बार सूर्यास्त होता है। इसका नाम एच डी–131399 बी रखा गया है। इसे काफी युवा ग्रह बताया गया है मात्र 1.6 करोड़ वर्ष। वैज्ञानिक हमारी पृथ्वी की आयु 4.5 अरब वर्ष मानते हैं जो वैदिक विचारधारा के काफी निकट है।

राजस्थान पत्रिका 15–7–2017 व 25–7–2017 ज्ञान–विज्ञान कालम के अनुसार वैज्ञानिकों ने अरबों सूर्य के बराबर सरस्वती नामक सूर्य की खोज किया है। यह हमारी पृथ्वी से 400 लाख प्रकाश वर्ष लाख प्रकाश वर्ष दूर है और लगभग 10 अरब वर्ष से भी अधिक पुराना है। वैज्ञानिकों ने अपनी आकाशगंगा से 1000 गुना ज्यादा चमकीली आकाशगंगा की खोज की है। इस आकाशगंगा में सालाना 1000 सौर द्रव्यमान के बराबर तारों का निर्माण हो रहा है। इस उदाहरण से यह बता सिद्ध हो रही है कि सृष्टि का प्रलय (समस्त दृश्यादृश्य सृष्टि) एक साथ नहीं होता। यदि ऐसा होता तो वर्तमान में तारों के बनने की बात नहीं आती। कहीं सृजन होता है तो कहीं प्रलय। यह चलता रहता है। मोक्षप्राप्त आत्माओं को प्रलयावस्था में कोई अन्तर नहीं आता सिर्फ बद्ध आत्माएँ मूर्च्छित सी पड़ी रहती हैं। मुक्त आत्माएँ अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड में निर्बन्ध विचरण करती हैं।

उपयुर्क्त विवरण के आधार पर ब्रह्माण्डों के बारे में कल्पना करें तो पता चलेगा कि ये मानव के चिन्तन से बहुत दूर हैं। सर्वशक्तिमान परमात्मा ही इनका नियन्ता है। वेदमंत्रों के भावार्थों में बार–बार कोटि–कोटि ब्रह्माण्ड शब्दों का प्रयोग उक्त उदाहरण को परिपुष्ट करता है। हम वैज्ञानिक आधार पर ब्रह्माण्ड और परमात्मा का चिन्तन करेंगे तो अवश्य ही हम एक परमसत्ता की सर्वव्यापकता का अनुमान कर सकेंगे। वेद और विज्ञान एक सिक्के के दो पहलू सिद्ध होंगे।

आर्य समाज रावतभाटा
वाया कोटा (राजस्थान) 323307

वेद की वैज्ञानिकता

● डॉ. रमा

भारत एक ऐसा देश है जहाँ विज्ञान और धर्म पर बराबर मात्रा में बहस होती है। यही एक मात्र ऐसा देश है जहाँ विश्व की सभी संस्कृतियों का समावेश है। यहाँ जितनी बहसें राम पर होती हैं उतनी बहसें अल्लाह पर भी होती हैं। विज्ञान और वेद दोनों ही आपस में संबंध रखते हैं। विज्ञान और धर्म का भी गहरा संबंध होता है। जहाँ विज्ञान तथ्यों व प्रयोगों पर केन्द्रित होता है वहीं धर्म आस्था और विश्वास पर मनुष्य जीवन को गहराई से प्रभावित करता है। दोनों ही मनुष्य के लिए शक्ति के अपार स्रोत हैं।

संसार के सभी देश अपनी विशेषताओं के कारण जाने जाते हैं। भारत की पहचान वैदिक ज्ञान और परंपरा से है। अपने इसी वेद–विज्ञान के कारण भारतीय–संस्कृति विश्वभर में अपनी श्रेष्ठ पहचान बना पाई है। आज का युग विज्ञान और वैज्ञानिकता का युग है। सम्पूर्ण विश्व ने आज भारत की वैज्ञानिकता को स्वीकार भी कर लिया है। शायद यही कारण हैं कि विदेशों में गीता और भारतीय वेदों का अध्ययन बहुत बड़ी मात्रा में होने लगा है। भारत का वैदिक सिद्धान्त ''हेयम् दुःखम् अनागतम्'' का सिद्धान्त है, जिसमें समस्याएँ उत्पन्न ही नहीं होने पाती हैं और अगर उत्पन्न भी हुई तो उनका निदान भी उसी में है। भावातीत ध्यान, त्रिकाल संध्यावंदन, ज्योतिष के अनुसार देवी–देवताओं की पर्व–उपासना, पूजा–अर्चना, वैदिक अनुष्ठान, यज्ञ, ग्रहशांति, वास्तुशांति अनुष्ठान ऐसे ही विधान हैं, जिनके नियमित प्रयोग से व्यक्ति और समाज में समानता का भाव आता है और समरसता भी। वेद सम्पूर्ण विश्व में मानवता के विस्तार का संदेश देते हैं। इतना ही नहीं मनुष्य के चारित्रिक विकास में भी वेद और धार्मिक ग्रन्थों का स्थाई महत्त्व है। वेद के मार्ग पर चलकर मनुष्य उन समस्त जीवन मूल्यों से जुड़ सकता है जो उसके जीवन को नई दिशा देने में सहायक होते हैं। वेद मनुष्य में मानवता के गुण भरता है और उसे सामाजिक भी बनाता है। विज्ञान जहाँ मनुष्य को भौतिक सुख प्रदान करता है वहीं वेद और धर्म उसे आत्मिक सुख देते हैं। वेदरहित विज्ञान मनुष्य को सुख तो प्रदान कर सकता है लेकिन कभी–कभी विनाश का कारण भी बन जाता है। विज्ञान के द्वारा व्यक्ति चंद्रमा तक पहुँच चुका है वहीं परमाणु बम जैसे खतरनाक हथियार भी विकसित कर लिए हैं क्योंकि उसे मानसिक संतुष्टि और सद्भाव खत्म होते दिख रहे हैं। वेद के बारे मे प्रायः यह धारणा होती है कि वह मनुष्य को अंधविश्वासी और कर्मकांडी बना देता है पर यह सच नहीं है बल्कि इसमें कर्मकांड का पुरजोर विरोध होता है। विज्ञान के नए प्रयोगों और अनुसंधानों ने प्रकृति के अनेक गूढ रहस्यों को उजागर किया है परंतु अभी भी ऐसे अनगिनत रहस्य हैं जो विज्ञान की पहुँच से काफी दूर हैं। यह रहस्य सिर्फ वेदों के पास हैं।

वेद संस्कृत में हैं और पूरे विश्व ने माना है कि संस्कृत वैज्ञानिक भाषा है। संस्कृत को विश्व की प्रथम भाषा माना जाता है। इसका सुस्पष्ट व्याकरण और वर्णमाला की वैज्ञानिकता स्वयं सिद्ध है। वेद की भाषा होने के कारण संस्कृत को देवभाषा भी कहा जाता है। संस्कृत साहित्य की ही भाषा नहीं बल्कि संस्कार की भी भाषा भी है अतः इसका नाम संस्कृत है। केवल संस्कृत ही एक भाषा है जिसका नामकरण उसके बोलने वालों के नाम पर नहीं किया गया है। संस्कृत को संस्कारित करने वाले भी कोई साधारण भाषाविद् नहीं बल्कि महर्षि पाणिनि, महर्षि कात्यान और योग शास्त्र के प्रणेता महर्षि पतंजलि हैं। इन तीनों महर्षियों ने बड़ी कुशलता से योग की क्रियाओं को भाषा में समाविष्ट किया है। यही इस भाषा का रहस्य है। आज के युग में सबके हाथ में पहुँच चुका कंप्यूटर भी संस्कृत को ही समझता है। यह कंप्यूटर और कृत्रिम बुद्धि के लिये सबसे उपयुक्त भाषा माना जाता है। एक शोध से पाया गया कि संस्कृत पढ़ने में स्मरण शक्ति बढ़ती है। इसका वैज्ञानिक कारण है कि इसकी ध्वनियाँ मनुष्य को कई रोगों और नकारात्मक शक्तियों से बचा लेती हैं। संस्कृत की वैज्ञानिकता इससे भी सिद्ध होता है कि वाक्यों में शब्दों को किसी भी क्रम में रखा जा सकता है। इससे अर्थ का अनर्थ होने की संभावना बहुत कम होती है।

शिवकर बापूजी तलपदे कला एवं संस्कृत के विद्वान थे तथा आधुनिक समय के विमान के प्रथम आविष्कार कर्ता थे। उनका जन्म ई. 1864 में महाराष्ट्र में हुआ था। उनके विद्यार्थी जीवन में ही गुरु चिरंजीलाल वर्मा से वेद में वर्णित विद्याओं की जानकारी उन्हें मिली। उन्होंने स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' एवं 'ऋग्वेद एवं यजुर्वेद भाष्य' ग्रंथों का अध्ययन कर प्राचीन भारतीय विमानविद्या पर कार्य करने का निर्णय लिया। इसके लिए उन्होंने संस्कृत सीखकर वैदिक विमानविद्या पर अनुसंधान आरंभ किया। शिवकर ने ई. 1882 में एक प्रयोगशाला स्थापित की और ऋग्वेद के मंत्रों के आधार पर आधुनिक काल का पहला विमान का निर्णय किया। इसका परीक्षण ई. 1895 में मुंबई के चौपाटी समुद्र तट पर किया था। शिवकर महान वैज्ञानिक थे वे विमान को जनोपयोगी बनाना चाहते थे लेकिन उन्हें अंग्रेज सरकार से किसी भी प्रकार की सहायता नहीं मिली फिर उन्होंने ई. 1916 में पं. सुब्राय शास्त्री से महर्षि भारद्वाज की यन्त्रसर्वस्व–वैज्ञानिक प्रकरण ग्रन्थ का अध्ययन कर 'मरुत्सखा' विमान का निर्माण आरंभ किया उनकी मृत्यु के कारण संभव नहीं हो पाया।

वेद की भाषा ईश्वर ने बनायी और उसमें व्याकरण के नियम भी थे। वेद में सारी। आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानंद जी ने लिखा है, वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तकें हैं। वेद में व्याकरण है, गणित है, भूगोल है, खगोल है, नौका, विज्ञान विद्या, वायरलेस विद्या, तार विद्या सब है। लोग जो यह बात समझ रहे हैं, वह भ्रम में है। कोई विद्वान वैज्ञानिक बिना वेद का अध्ययन किए विज्ञान की खोज नहीं कर सकता। महर्षि दयानन्द जी का मानना है कि संसार में जितना भी सत्य फैला है, वह सब वेदों से ही गया है। कोई भी व्यक्ति वेद पढ़े बिना विद्वान नहीं हो सकता। उनका मानना था कि बिना वेद अध्ययन के कोई भी नया आविष्कार नहीं कर सकता।

भारतीय हिन्दू वेदों को मान्यता देते हैं क्योंकि वेदों में विज्ञान बताया गया है। एक ऐसा विज्ञान जो मानव कल्याण के लिए होता है। वेदों में जिस विज्ञान की चर्चा है वह मनुष्य का मानसिक विकास कर उनके कल्याण का रास्ता खोलता है। आज के युग में अति आधुनिक हो चुके विज्ञान ने मात्र सौ वर्षों में पृथ्वी को विनाश के गर्त में डाल दिया। वेदों में जिस विज्ञान की चर्चा हुई है वह आधुनिक विज्ञान की अपेक्षा, प्रगतिशील एवं समाज कल्याण कारक है। प्रारम्भिक काल के शोधकर्ताओं ने हिंदु ऋषियों की विद्वत्ता की गहराई के आगे नतमस्तक थे। आज के वैज्ञानिक भी इसका लोहा मानते हैं। गुरुत्वाकर्षण के विषय में लिखा है कि, पृथ्वी अपने आकाश का पदार्थ स्व–शक्ति से अपनी ओर खींच लेती हैं। इस कारण आकाश का पदार्थ पृथ्वी पर गिरता है। इससे सिद्ध होता है, कि उन्होंने गुरुत्वाकर्षण का शोध न्युटन से 500 वर्ष पूर्व लगा लिया था। परमाणुशास्त्र के जनक माने जाने वाले आचार्य कणाद अणु शास्त्रज्ञ जॉन डाल्टन के 2500 वर्ष पूर्व ही बता चुके थे कि 'द्रव्य के परमाणु होते हैं। आयुर्वेदिक औषधि के जनक आचार्य चरक ने शरीरशास्त्र, गर्भशास्त्र, रक्ताभिसरणशास्त्र, औषधिशास्त्र इत्यादिके विषय में अगाध शोध किया था। मधुमेह, क्षयरोग, हृदयविकार आदि दुर्धररोगों के उपचार के लिए अनेक औषधियों को चिन्हित किया। ऋषि भारद्वाज ने राइट बंधुओं से 2500 वर्ष पहले ही वायु की खोज कर ली थी। अग्नि मानव जीवन की सर्वप्रथम खोज हैं, ये विश्व की सबसे महानतम खोज की जा सकती है। इस मन्त्र में अग्नि की महत्ता का वर्णन हैं। ऋग्वेद का प्रथम मन्त्र किसी विशिष्ट देव को ही समर्पित किया जाना चाहिए। विशिष्ट में भी देवराज इन्द्र प्रधान हैं किन्तु फिर भी प्रथम मन्त्र उनको समर्पित नहीं किया गया। देवगुरु वृहस्पति तो इन्द्र के भी मार्गदर्शनकर्ता हैं पर प्रथम मन्त्र उनको भी समर्पित न होकर अग्नि को समर्पित किया गया इससे यह पता चलता है कि वैदिक काल में ही अग्नि की महत्ता का पता चल गया था।

इस प्रकार देखें तो वेद केवल मानव जीवन में ज्ञान का ही नहीं अपितु विज्ञान का भी विस्तार करते हैं। चारों वेदों में कुछ ऐसे तथ्य मिलते हैं जो स्पष्ट करते है कि वेद और विज्ञान का गहरा संबंध है। स्वामी दयानन्द सरस्वती के विचार में ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान वेदों के विषय हैं। जीव, ईश्वर, प्रकृति इन तीन अनादि नित्य सत्ताओं का निज स्वरूप का ज्ञान केवल वेदों से ही उपलब्ध होता हैं। यूरीपीय विद्वानों ने संस्कृत और आर्यभाषाओं और जाति के बारें में जानने के लिए वेदों का अध्ययन किया है। मैक्समूलर जैसे विश्वविख्यात विद्वान ने इनके अध्ययन के बाद संस्कृत भाषा और यूरोपीय शब्दों ओर व्याकरण का विश्लेषण किया था। इनके अनुसार लैटिन, ग्रीक, जर्मन आदि सहित कई यूरोपीय, फ़ारसी और संस्कृत का मूल का एक रहा होगा। इस सिद्धांत के प्रमाण लिए कई शब्दों का उल्लेख किया जाता है।

वेद प्राचीन भारत में रचित साहित्य हैं जो हिन्दुओं के प्राचीनतम और आधारभूत धर्मग्रंथ भी है। भारतीय संस्कृति में सनातन धर्म के मूल और सब से प्राचीन ग्रंथ हैं। वेदों को हमेशा ईश्वर कृत या ईश्वर रचित माना जाता है तथा भगवान ब्रह्मा को इनका रचियिता माना जाता है। इन चारों वेदों को श्रुति भी कहते हैं, जिसका अर्थ है 'सुना हुआ'। अन्य हिन्दू ग्रंथों को स्मृति कहते हैं यानि मनुष्यों की बुद्धि या स्मृति के आधार पर इनका सृजन किया गया है।

हमारे पास मूल रूप में चार वेद हैं जिनकी अपनी–अपनी प्रकृति है, अपने–अपने तरह के विषय इनमें निहित हैं। सबसे पहला वेद ऋग्वेद है इसमें देवताओं का आह्वान करने के लिए मन्त्र हैं इसे ही हम सर्वप्रथम वेद मानते है। दूसरा वेद यजुर्वेद यज्ञ की असल प्रक्रिया के लिए गद्य मन्त्र के रूप में है। यानि यह क्षत्रियों में सभी तरह के संस्कार देने और युद्ध के क्षेत्र में सभी तरह के ज्ञान के लिए जरूरी है। वेद सामवेद है इसमें यज्ञ में गाने के लिए संगीतमय मन्त्र हैं यानि इस वेद में गीत–संगीत लय–ताल रस–छंद आदि के बारे में ज्ञान दिया गया है। तीसरा चौथा और अंतिम वेद अथर्ववेद है इसमें जादू, चमत्कार, आरोग्य, यज्ञ के लिए मन्त्र हैं। जो मूलतः व्यापारियों के लिए उपयोगी है।

हंसराज कॉलेज, दिल्ली
संपर्क–9891172389

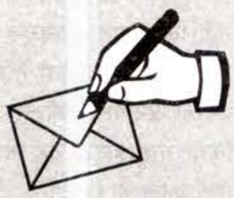

पत्र/कविता

हम करते उसका अभिनन्दन

घनघोर तिमिर का वक्ष चीर, भू पर उतरी थी एक किरन,
संदेश सवेरे का लाई, हम करते उसका अभिनन्दन।
जड़ता के पूजन अर्चन ने जब चिंतन का अपमान किया,
मानव के मन में तूने चेतना का आह्न किया।।
जंजीरों से जकड़े स्वदेश को रात दिखाई थी तूने,
जिसको न काल भी बुझा सका वह शमा जलाई थी तूने।
कर दिया स्वराज्य का शंख ध्वनित तूने देश वाणी में,
तप त्याग तेज के अंगारे, पाले अनमोल जवानी में।।
तूने अनाथ की आह सुनी, विधवाओं का क्रन्दन देखा,
तूने दोपहरी के नयनों में, लहराता सावन देखा।
तू अगर न बनता प्रबल वेश,निष्ठा स्वराज्य की आंधी का,
कभी न पूरा तो सकता,सपना भारत में मांधी का।
तू महा देश का निर्माता, भारत का भाग्य विधाता है,
इस धरती का कवि–आर्य श्रद्धा से शीश झुकाता है।

हरिश्चन्द्र आर्य
उपदेश विभाग अमरोहा,
मुरादाबाद मंडल
मो. 9412322422

मुख्यमन्त्री के फैसले को ग्रहण लगा

किसानों के लिए सबसे बड़ी समस्या तब आ खड़ी होती है जब उसकी लहलहाती फसल को कुछ ही समय में नील गायें या सूअर आकर खा जाएँ या नष्ट कर दें। भला उसके लिए इससे बड़ी दु:खद घटना और क्या हो सकती है? कभी अनावृष्टि, कभी अतिवृष्टि और कभी वन्य पशुओं की कुदृष्टि! क्या कभी इन त्र्यष्टियों से कृषक मुक्त हो सकता है? सम्भवतः नहीं। क्योंकि प्रथम दो ऋष्टियाँ– अनावृष्टि और अतिवृष्टि दैवी आपदाएँ हैं। इन पर किसी का वश नहीं। तीसरी ऋष्टि है– वन्य पशुओं की कुदृष्टि। इसका समाधान अपने वश में है। वन्य पशुओं से फसल की रक्षा की जा सकती है। इसी को ध्यान में रखते हुए कैप्टन सरकार ने एक अल्पकालिक घोषणा की–

"आवारा पशुओं से फसल बचाने के लिए गोली चलाने की शार्ट टाइम मंजूरी" चण्डीगढ़। जागरण 14 जुलाई 2017

आवारा व जंगली जानवरों से फसलों को बचाने के लिए सरकार ने किसानों को 45 दिन के लिए शार्ट टाइम गोली चलाने के लाइसेंस देने की मंजूरी दे दी है। वन्य जीव बोर्ड के अवसरों के साथ हुई मुख्यमन्त्री की बैठक में यह मंजूरी दी गई।

मुख्यमन्त्री ने पशुपालन विभाग को सांडों की नसबन्दी करने की मंजूरी दे दी है। फसलों को नुकसान पहुँचाने वाले आवारा व जंगली पशुओं को गोली मारने के परमिट की प्रक्रिया ऑनलाइन करने के साथ इसको वाट्सएप पर उपलब्ध करवाने का भी फैसला किया गया है। यह परमिट सीमित शिकार के लिए जमीन के निजी मालिकों के लिए होंगे। इनका प्रयोग केवल पशुओं से फसलों के नुकसान को बचाने के लिए ही किया जा सकेगा।

परन्तु अगले ही दिन अर्थात् 15 जुलाई 2017 को मुख्यमन्त्री के फैसले को ग्रहण लग गया। जब विश्नोई समाज ने इसे वापस लेने की चेतावनी दी–

"पशुओं पर गोली नहीं चलाने देगा विश्नोई समाज"

उन्होंने इस निर्णय को वापस लेने की चेतावनी देते हुए कहा कि वह इस निर्णय को किसी भी सूरत में लागू नहीं होने देंगे। विश्नोई समाज ने वन्य पशु नीलगाय आदि को मारने का विरोध तो किया है परन्तु इस समस्या के समाधान के लिए वैकल्पिक व्यवस्था का प्रारूप प्रस्तुत नहीं किया है। कितना अच्छा होता यदि विश्नोई समाज सरकार का कार्य आसान करते हुए वन्य पशुओं से बचाव के लिए सुझाव भी देता। साथ ही उसको व्यावहारिक रूप देने के लिए उसी प्रकार आगे आता जैसे जीव रक्षा हेतु अपना सर्वस्व न्योछावर करने के लिए तत्पर है। (एक विश्नोई महिला द्वारा हिरण के बच्चे को अपना दूध पिलाने की घटना आज भी स्मरण है)। उसका यह त्याग प्रशंसनीय है परन्तु है एकांगी और विचारणीय भी। आशा है विश्नोई समाज के वे सभी श्रेष्ठजन इसे सर्वांग एवं सम्पूर्ण बनाने का उपाय सर्वजन हिताय अवश्य प्रस्तुत करेंगे। इससे विश्नोई समाज की महत्ता, गौरव, मानसम्मान, सौहार्द और उदारता में अत्यधिक अभिवृद्धि होगी।

विश्नोई समाज का भी बहुत बड़ा वर्ग कृषि पर ही आश्रित है। इस स्थिति में क्या उन कृषकों के सम्मुख नीलगायों या सूअरों द्वारा फसल नष्ट किए जाने की समस्या नहीं आई अथवा नहीं आती? यदि नहीं तो क्यों और कैसे? यदि हाँ तो उसका समाधान क्या था? साथ ही इस पर उन कृषकों की क्या प्रतिक्रिया है? क्या इसे जानने का प्रयत्न किया गया? हो सकता है उच्चवर्गीय जमींदार इस हानि को सहन कर लें। परन्तु साधारण किसान का क्या बनेगा? जिसके पास संभवतः उतनी ही फसल हो जितनी वन्य पशुओं ने नष्ट कर दी।

अतः मेरा विश्नोई समाज के प्रबुद्ध शिक्षित वर्ग से निवेदन है कि वह अपने हिंसा रहित सिद्धान्त एवं पक्ष की रक्षा हेतु तर्क संगत, युक्ति युक्त एवं स्वीकार्य समाधान भी प्रस्तुत करे।

पण्डित वेदप्रकाश शास्त्री,
शास्त्री भवन,
4–E, कैलाशनगर
फाजिलका–पंजाब–152123
मो. 9463428299

****

गरीबों के हकीम- "नीम" लुप्त हो रहे हैं

यह सर्वविदित है कि सदियों से देश के सुदूर ग्रामीण आंचलों में "नीम" को गरीबों का हकीम की उपमा दी जाती थी। नीम वृक्ष के समस्त पत्ते वातावरण में हानिकारक कीटों को पैदा नहीं होने देते थे। नीम की दातुन प्रत्येक ग्रामवासी सुबह को अवश्य प्रयोग करता था। नीम की निंबोली विभिन्न त्वचा रोगों में एकमात्र संजीवनी औषधी मानी जाती थी। नीम वृक्ष की लकड़ी अधिकांश घरों की रौनक बढ़ाती थी क्योंकि यह दीमक प्रतिरोधी थी।

खेद है कि आधुनिकता के युग में यह संजीवनी बूटी अब लुप्त प्रायः हो गई है? जिसके कारण वातावरण संक्रामक कीटों से भर गया है? पर्यावरण विदों के अनुसंधान से यह निष्कर्ष आ रहा है कि यदि व्यापक स्तर पर "नीम" के वृक्षों का रोपण किया जाये तो संक्रामक हानिकारक कीटों के प्रवाह को आसानी से रोका जा सकता है। राष्ट्रीय वन अनुसंधान केन्द्र देहरादून का मत है कि यदि मच्छरों से प्रभावित क्षेत्रों में नीम के वृक्षों का रोपण व्यापक स्तर पर किया जाये तो लाभ होगा।

कृष्ण मोहन गोयल, अमरोहा
मो. 9927064104

****

हम लाखों गौरवान्वित हैं

भारत सरकार द्वारा डा. पूनम सूरी जी को गणतन्त्र दिवस, 2017 पर पद्मश्री सम्मान से समलंकृत किया गया। एतदर्थ भारत सरकार को धन्यवाद! श्री सूरी हम आर्यजनों के लिए यह अवसर उपस्थित किया, उन्हें साधुवाद!

पद्मश्री पूनम सूरी जी ने मन–वचन–कर्म से अनथक सेवा की है। इसी सेवा ने आर्य जगत् के लिए यह सम्मान अर्जित किया है। भारत स्तर पर प्राप्त सम्मान बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। मान्य सूरी जी के पीछे खड़े हम लाखों लोग गौरवान्वित हैं।

ईश्वर आपको सुदीर्घ जीवन दे! जीवन को सार्थक तो आप कर ही रहे हैं, आगे भी करेंगे।

डॉ रूपचन्द्र दीपक
6105, पतंजलि योग पीठ फेज–2
हरिद्वार– 249405

****

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल रतवार में वृक्षारोपण कार्यक्रम संपन्न

डी.ए.वी. रतवार में 'हर परिसर' हरा परिसर' वृक्षारोपण कार्यक्रम संपन्न हुआ। वन एवं पर्यावरण विभाग के इस वृक्षारोपण कार्यक्रम में वन विभाग, भभुआ (कैमूर) के कई वन अधिकारी उपस्थित थे। अतिथि सह प्राचार्य श्री ए.के. बक्शी ने विभिन्न डी.ए.वी स्कूलों से पधारे प्राचार्य बंधुओं, विद्यार्थियों, शिक्षक–शिक्षिकाओं सहित वृक्षारोपण किया। इस अवसर पर प्रस्तुत रंगारंग कार्यक्रम के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण हेतु वृक्षारोपण पर बल दिया गया। गायन, नृत्य, भाव–नाटिका आदि पेड़–पौधों के महत्व को प्रदर्शित करने तथा जागरूकता

बढ़ाने वाले थे। वन विभाग के अधिकारियों ने इन कार्यक्रमों की भूरि–भूरि प्रशंसा की।

इस अवसर पर प्राचार्य श्री डी.के. घोष, श्री अनिल सिंह, श्री पी.सी.त्रिपाठी, श्री एस.पी. यादव, श्री यू.एन.मिश्रा श्री जी.के.सहाय आदि उपस्थित थे। धन्यवाद ज्ञापन डी.ए.वी पब्लिक स्कूल, विक्रमगंज के प्राचार्य श्री प्रेमचंद त्रिपाठी ने किया।

आर्य समाज पटेल नगर पानीपत में श्री कृष्ण जन्माष्टमी पर्व सफलतापूर्वक सम्पन्न

आर्य केन्द्रीय सभा के तत्वावधान में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व आर्य समाज पटेल नगर में बड़ी श्रद्धापूर्वक मनाया गया। मुख्य प्रवक्ता आचार्य वीरेन्द्र रत्नम ने अपने वक्तव्य में कहा कि सभी लोगों की भावना को देखते हुए आर्य समाज भी श्री कृष्ण जन्माष्टमी एवं रामनवमी जैसे पर्व हर वर्ष इसी तरह बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश में स्पष्ट रूप में कहा कि श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है उनका गुण–कर्म–स्वभाव व चरित्र आप्त (श्रेष्ठ) पुरुषों के समान है। उन्होंने जन्म से मरण प्रर्यन्त कुछ भी बुरा कार्य नहीं किया। वह प्रतिदिन यज्ञ संध्या किया करते थे।

आचार्य रत्नम् ने कहा यज्ञ करने वाले का घर सौभाग्य तथा धन–धान्य से परिपूर्ण होता है। यज्ञ ही श्रेष्ठ कर्म है। आजकल के प्रदूषक वायुमण्डल में प्रत्येक को यज्ञ करना नितांत आवश्यक है।

उन्होंने कहा हमें अपने बच्चे गुरुकुलों में पढ़ाने के लिए भेजने चाहिए और यदि हम अपने बच्चों को नहीं भेज सकते तो गुरुकुल के एक विद्यार्थी का कम से कम साल भर का खर्च तो उठाना ही चाहिए। यदि हम भारतीय संस्कृति से श्री कृष्ण, श्री रामचन्द्र व स्वामी दयानन्द जी का नाम निकाल दें तो हमारी संस्कृति शून्य हो जायेगी।

आचार्य श्री संजीव वेदालंकार के ब्रह्मत्व में यज्ञ सम्पन्न हुआ। आचार्य समाज के सुप्रसिद्ध भजनोपदेक आचार्य श्री कुलदीप आर्य के श्री कृष्ण, आर्य समाज व देशभक्ति के भजनों में एक जोश भरने वाली सफूर्ति दी। प्रसिद्ध डॉ. दर्शन लाल आजाद की कविताओं द्वारा गजब का समय बाँधा गया।

समारोह की अध्यक्षता आर्य समाज पटेल नगर प्रधान श्री हंसराज बजाज ने की। मुख्यतिथि के तौर पर सुप्रसिद्ध उद्योगपति श्री राजेश चुघ ने अपनी धर्मपत्नी सुनीता चुघ के साथ उपस्थिति दर्ज करवाई। ध्वजारोहण आर्य सुरेश मलिक प्रधान आर्य समाज हुड्डा द्वारा किया गया। विशिष्ट अतिथि के तौर पर श्री राणा ठकराल एवं श्रीमति सुमन ठकराल तथा सम्मानित अतिथि श्री जगदीश लीखा एवं श्रीमती कमलेश लीखा प्रधाना आर्य समाज खैल बाजार सहित अनेक आमंत्रित महानुभावों इस अवसर पर उपस्थित थे।

परोपकारिणी सभा करेगी योग साधना शिविर का आयोजन

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर से प्राप्त विज्ञप्ति के अनुसार परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर में योग साधना शिविर का आयोजन दिनांक 05 अक्टूबर 2017 तक किया जा रहा है। शिविर से पूर्व रू. 1,000/– शुल्क जमा कराकर अपना पंजीयन कराना आवश्यक है। शिविर में माताएँ–बहनें भी भाग ले सकती हैं। पुरूषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जायेगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा और शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति किसी को नहीं दी जायेगी। इच्छुक प्रार्थी मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर को दूरभाष नं. 0145–2460164 अथवा Email: psabhaa@gmail.com पर सम्पर्क करें।

134वाँ ऋषि बलिदान दिवस का आयोजन

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर से प्राप्त विज्ञप्ति के अनुसार परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वाधान में 134वाँ ऋषि बलिदान दिवस समारोह का आयोजन दिनांक 27,28,29 अक्टुबर 2017 को समारोह पूर्वक किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत ऋग्वेद पारायण यज्ञ ऋषि उद्यान अजमेर की यज्ञशाला में होगा और ब्रह्मा वेदों के प्रकाण्ड पण्डित आचार्य श्री सत्यानन्द वेदवागीश होंगे।

वेद गोष्ठी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ दिल्ली एवं अनुसंधान केन्द्र परोपकारिणी सभा के संयुक्त प्रयास से होगी जिसमें देश के विविध विद्वान अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण वेद प्रतियोगिता का भी आयोजन किया जा रहा है जिसमें 21 वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं।

इच्छुक छात्र अपने अपने गुरूकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर दो दो छायाचित्र सहित अपना परिचय 15 अक्टूबर 2017 तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज सकते हैं। प्रतिवर्ष की इस वर्ष भी विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्ताओं को समारोह में सम्मानित किया जायेगा।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 30/31-08-2017

गुरुकुल पौंधा–देहरादून में उपनयन संस्कार सम्पन्न

गुरुकुल पौंधा में 28 नये ब्रह्मचारियों के प्रवेशार्थ उपनयन एवं वेदारम्भ संस्कार आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध एवं ऋषिभक्त विद्वान स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

संस्कार यज्ञ का संचालन करते हुए स्वामी प्रणवानन्द जी ने कहा कि संस्कार के आरम्भ में ब्रह्मचारी अपने आचार्य से प्रार्थना करता है कि मैं आपका ब्रह्मचारी बन कर विद्या प्राप्त करना चाहता हूं। स्वामी जी ने बताया कि ब्रह्मचारी गुरुकुल में लगभग 18 वर्ष तक आचार्य से विद्या प्राप्त करते हैं। आचार्य जी ब्रह्मचारियों की उन्नति में संलग्न रहते हैं, वर्ष में एक बार दूर दूर गांवों में जाकर अन्न संग्रह करते हैं। इससे गुरुकुल का साल भर का काम चलता है। उन्होंने कहा गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की एक विशेषता यह भी है कि ब्रह्मचारी भिक्षा वृत्ति करें और उस अन्न का ही आचार्य व ब्रह्मचारी मिलकर भक्षण करें।

इसके बाद वेदारम्भ संस्कार के अनुसार भिक्षा की प्रकिया पूर्ण कराई गई और संस्कार सम्पन्न हुआ। नये ब्रह्मचारियों में चार ब्रह्मचारियों ने इस अवसर पर एक भजन प्रस्तुत किया जिसकी पहली पंक्ति थी 'सच्ची वैदिक मर्यादायें हैं सोलह संस्कार।'

स्वामी जी ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा कि माता–पिता केवल बालक का शरीर बनाते हैं। जन्म से हम सब शूद्र पैदा हुए हैं। संस्कारों से हम द्विज अर्थात् द्वि जन्मा, दो जन्म वाले, बनते हैं। गुरुकुलों में आचार्य संस्कार देकर ब्रह्मचारियों को ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य आदि वर्ण का बनाता है। स्वामी जी ने चरक ऋषि की चर्चा करते हुए कहा कि संस्कारों से मनुष्य की शारीरिक कमियों की पूर्ति हो जाती हैं। उन्होंने कहा कि लोग कहते हैं कि वेद कठिन हैं और मैं कहता हूं कि वेद सरल हैं। वेद स्वाभाविक ज्ञान है। स्वामी जी ने कहा आचार्य वह होता है जो सबका अग्रणीय हो। परमात्मा हमारा आचार्य है परन्तु हमारा आचार्य भी आचार्य है।

डी.ए.वी. पुष्पांजलि ने मनाया संस्कृत सप्ताह

डी.ए.वी. स्कूल पुष्पांजलि में संस्कृत सप्ताह का आयोजन किया गया जिसमें छात्र–छात्राओं ने बड़े उत्साह से भाग लिया। विभिन्न कक्षाओं के छात्र–छात्राओं ने प्रतिदिन नाटक, श्लोक गायन, पुस्तक पट्टिका भाग लिया। छात्र–छात्राओं ने संस्कृत संवर्धन रैली भी निकाली तथा उत्साह वर्धक गीत "पुरः पुरः प्रगच्छ रे" द्वारा विद्यालय को गुंजायमान किया। विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती रश्मिराज बिस्वाल ने विद्यार्थियों को संस्कृत सप्ताह में आयोजित होने वाले कार्यक्रमों की शुभकामनाएँ दी।

समापन दिवस पर आयोजित कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए प्रधानाचार्या जी ने कहा कि संस्कृत मात्र एक भाषा ही नहीं है, अपितु हमारे विचारों को आकार देने वाली, संस्कार देने वाली, ऐसी भाषा है, जिसको हमारे ऋषि मुनियों ने अपने चिन्तन और दृष्टिकोण से युक्त किया है। संस्कृत, संस्कार की भाषा है। सबके भीतर अच्छे संस्कार हों, इसके लिए हमें संस्कृत भाषा से जुड़े ही रहना चाहिए।

अन्त में **"जयतु संस्कृतं जयतु भारतं"** के उद्‌घोष से संस्कृत सप्ताह का समापन हुआ।

डी.ए.वी. अशोक विहार फेज़–4, में स्वतंत्रता दिवस एवं पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल अशोक विहार, फेज़ –4 में स्वतंत्रता दिवस तथा पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन बड़ी धूमधाम से किया गया। समारोह का शुभारंभ ध्वजारोहण एवं राष्ट्रगान के साथ हुआ। विद्यालय के चेयरमैन तथा डी.ए.वी. सी. एम.सी के वाइस चेयरमैन डॉ. एन.के. ओबरॉय ने समारोह में मुख्य अतिथि की भूमिका निभाई। विद्यालय के छात्रों द्वारा देशभक्ति से सराबोर एवं विभिन्न जीवन मूल्यों को दर्शाने वाला रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती कुसुम भारद्वाज ने अपने संबोधन में छात्रों को भविष्य के लिए तैयार रहने और आत्मविश्वास से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने की प्रेरणा देते हुए कहा कि वे देश का भविष्य हैं और उनके कार्य एवं उद्देश्य ऐसे होने चाहिएँ कि राष्ट्र को उन पर गर्व हो।

तत्पश्चात् पुरस्कार वितरण हुआ जिसमें सत्र 2016–17 में शिक्षा एवं खेल के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया गया। विद्यालय की मैनेजर श्रीमती आदर्श कोहली ने भी छात्रों को आशीर्वाद एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए शुभकामनाएँ दीं।

चेयरमैन डॉ. ओबरॉय ने अपने संबोधन में शिक्षा के साथ चरित्र निर्माण की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि विद्यालयों में ऐसी गतिविधियाँ करवाई जानी चाहिएँ जो छात्रों में नैतिक मूल्यों का विकास कर सकें। अंत में छात्रों की मनोहारी नृत्य प्रस्तुति के साथ समारोह का समापन हुआ।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**